आरएनआई पंजीयन RAJHIN/2016/72902

डाक पंजीयन RJ/ UD/ 29-150/ 2017-2019

शब्द रंजन

संस्थापक एवं संरक्षक डॉ. महेन्द्र भानावत

विचार एवं जन संवाद का पाक्षिक

वर्ष 3 | अंक 12 | उदयपुर रविवार 01 जुलाई 2018 | पेज 8 | मूल्य 5 रू.

वे दिन और वे ढूला-ढूली

बच्चों के खेलों में ढूला-ढूली का विवाह कई दृष्टियों में महत्वपूर्ण एवं उपयोगी रहा है। इस खेल में उन्हें भावी गृहस्थ जीवन के सुचारू प्रबंधन की शिक्षा मिल जाती है। जुलाई माह की 1973 की बात है, अचानक एक दिन नौ वर्षीय कविता को अपनी ढूली की याद हो आई। बिस्तर से उठते ही वह सीधी अपनी उस पेटी की ओर लपकी जिसमें उसने उस गुड़िया को छिपा रखा था। हम लोग चाय पी रहे थे। उसने आते ही अपनी गुड़िया के लिए चाय और चम्मच मांगा। चाय और चम्मच देते हुए उसकी मम्मी की दृष्टि जब उस गुड़िया पर गई तो उसे नंगी पाकर वह झल्ला उठी और कहने लगी- 'जल्दी से इसे कपड़े पहनाओ। बरसात में गुड़िया कभी नंगी नहीं रहती। पांच-सात बरसों से पानी के लाले पड़ रहे हैं। नंगी गुड़ियाएं डाकनियां बन जाती हैं और पानी रोक देती हैं।' कविता ने चाय का आधा कप छोड़ा और पहले गुड़िया को साड़ी-घाघरा पहनाया।

मैं सोचता रह गया। मुझे याद हो आया यह मौसम देवी-देवताओं के सोने का है। कोई देवताओं को छूता नहीं। पाबूजी देवनारायण की पड़ें बनाकर अपनी आजीविका चलाने वाले जोशी चितेरे भी इस ऋतु में पड़ांकन नहीं करते। पड़ें बांचने वाले भोपे भी इन दिनों अपना यह कर्म नहीं करते। पच्चीसों प्रकार के देवी-देवता बनाने वाले मोलेला के कुम्हार भी इन दिनों मिट्टी नहीं गूंदते और न कहीं देव-देवरों में चौमासे में कहीं देवता ही प्रतिष्ठित होते हैं। यही क्यों, घर के पूरवजों को ही क्यों न लें, इन पूरवजों सम्बन्धी जरूरी से जरूरी काम तक इस मौसम में रोक दिये जाते हैं। न रातिजगा दिया जाता है न नये पूरवज को छाबने ही बिठाया जाता है।

इन देवी-देवताओं की तरह ये ढूलीफूत्यें भी साधारण मानव नहीं होकर देवता तुल्य ही हैं। इसीलिए इस मौसम में इनके सोने का विधान है। ये केवल चार महीने सोते हैं परन्तु चूंकि नन्हें-नन्हें बच्चों के नन्हें-नन्हें देवता इतनी लम्बी अवधि तक नहीं सो सकते हैं। कभी पलक मूंदते हैं तो कभी अधर फरकाते रहते हैं। इसलिए इनके साथ यह छूट रख दी गई कि इन्हें सुलाया नहीं जाये तो कम से कम नंगा तो नहीं रखा जाय ताकि बरसात की कोई भी बूंद इनके शरीर को नहीं छू पाये।

यदि छू गई तो फिर ये अनिष्ट किये बिना रहेंगे नहीं अत: इन्हें कपड़ों से ढककर रखने का सिलसिला प्रारम्भ हुआ। बच्चों के ये देव बच्चों की राजी-खुशी और मान-मर्यादा पर चलते हैं। जहां बच्चे इनका अच्छी तरह लालन-पालन करते हैं। अच्छा ओढ़ाते-पहनाते हैं वहां इन्हें पूरा नंगा तक घसीटते हैं परन्तु इनमें भी वे आनंद का भाव रखते हैं लेकिन बरसात में तो उन्हें अनिवार्यत: अपनी मर्यादा में रहना ही पड़ता है। इसलिए प्राय: इस मौसम में ढूला-ढूली के खेल बच्चों द्वारा नहीं खेले जाते हैं।

बच्चों के ये देव साधारण देव हैं।

गणगौर-ईसर आदि विशिष्ट देवों के साथ तो किसी प्रकार की कोई छूट नहीं रहती। पिछली गणगौर पर ही मैंने देखा छोटे-छोटे बच्चों के नन्हें-नन्हें गणगौर-ईसर मुहूर्त के अनुसार पूरे वर्ष भर के लिए जब तक अगला गणगौर त्यौहार नहीं आये, कपड़ों से उन्हें ढककर किसी बोरी तापड़ में सुला दिये जाते हैं। सुलाते समय इनके शरीर से सारे कपड़े-लत्ते तथा गहने-गांठे खोल लिये जाते हैं। बहुत से लोग गणगौर के साथ-साथ बच्चों की इन छोटी गणगौरों को भी पानी में ठंडी कर देते हैं। गणगौर के बाद आने वाली निर्जला ग्यारस भी इसी प्रकार इन ढूले-ढूलियों को पधराने का दिन होता है जब कुछ बच्चे अपने ढूले-ढूलों को विधिपूर्वक किसी सरोवर अथवा कुए-बावड़ी में ठंडा कर आते हैं परन्तु चूंकि बच्चों का इनके साथ इतना अधिक आत्मीय भाव उमड़ पड़ता है कि वे अपने से इन्हें जुदा करना नहीं चाहते अत: ऐसी स्थिति में वे इन्हें अपने ही घरों में बंद कर सुला देते हैं।

ढूली-फूत्यों की यह एक ही कला गृहस्थ जीवन की कई कलाओं का समन्वय प्रस्तुत कर बच्चों को उनके भावी जीवन का सुनहरा प्रशिक्षण प्रदान करती है। बच्चे इनके लिए क्या नहीं करते। अपनी मां-बहिनों के सहयोग से इन्हें तैयार करते हैं। इनके लिए अच्छे से अच्छे कपड़े बनाते हैं। उन कपड़ों को कौर-किनारी तथा लेरगोटों से सजाते हैं। उनके लिए लालों मोती के जेवर तैयार करते हैं। अच्छी-अच्छी मिठाइयां बनाते हैं। पहले इन्हें खिलाते हैं फिर आपस में मिल-बांटकर खाते हैं। इससे आपसी प्रेम, सौहार्द्र एवं भाईचारे का भाव पैदा होता है। छह वर्ष की कहानी और तीन वर्ष का तुक्तक दिन-रात अपनी गुड़िया के पीछे लगे रहते। अपने साथ वे उसे भी चाय-दूध पिलाते। खुद आम खाते तो उसकी एक चीर उसके मुंह पर भी रख देते। इससे जब मुंह गंदा हो जाता तो उसे वे जरा सा पानी लगा कर कपड़े से पौंछ देते। सोते समय वे उसे अपने साथ चिपकाकर सोते। गर्मी पड़ने पर भी वे उसे पूरा ओढ़ाते। मुंह ढक देते और फिर अचानक जब उन्हें ध्यान आता कि उसे गर्मी लग रही है तो वे उसके लिए पंखा चला देते। अपना तकिया उसके लगाकर कभी-कभी स्वयं तकिये के बिना सो जाते। कुछ समय बाद कहानी उठती, यह जानकर कि वह रो रही है, उसे अपनी गोद में ले लेती और दूध पिलाने का उपक्रम करती फिर सुला देती और स्वयं भी अपनी नींद में खो जाती।

बच्चों में इनके प्रति वही भाव है जो स्वयं अपने प्रति है। गुड़िया कुछ नहीं खाती-पीती परन्तु जरा सा चम्मच उसके मुंह पर लगा देने मात्र से ही बच्चे यही समझ लेते हैं कि उसने खूब सारा खा-पी लिया है। गुड़िया के सजीव और निर्जीव होने जैसी उनके दिमाग में कोई कल्पना नहीं। एक दिन तो कहानी ने अच्छा-खासा साबुन लगाकर अपनी गुड़िया को नहला दिया था।

ढूला-ढूली बनाने और उनके ब्याह रचाने की यह कला तब बच्चों में बड़ी लोकप्रिय थी। देवीलाल सामर ने इस सम्बन्ध में एक जगह लिखा- ''ढूला-ढूली बनाने की कला बच्चों के दैनिक जीवन में किसी समय इतना महत्व रखती थी और स्वयं पारिवारिकजन उसमें इतनी रूचि लेते थे कि इसकी आज हम कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। इन ढूला-ढूलियों के लिए नानाप्रकार के कपड़े, किनोर आदि खरीदे जाते थे। स्वयं बच्चे उनके कपड़े सीते थे। उन पर गोटा-किनोर लगाते थे। जहां रंगाई की आवश्यकता होती थी, वे स्वयं ही रंग लेते थे। उसके सोने, बैठने आदि के लिए गदरे, तकिये तथा पलंग बनाये जाते थे। उनके श्रृंगार के लिए मोतियों की मालायें तथा माथे की अत्यंत नयनाभिराम रखड़ी बनाई जाती थी। उसमें चमकीले कांच और सितारे लगाये जाते थे। हाथ-पांव के सभी जेवरों में न केवल मोतियों की लड़ियां बल्कि सोना-चांदी के तारों द्वारा स्वयं के हाथों से बनाई हुई कड़ियों का उपयोग करते थे।

-शेष पृष्ठ सात पर

शिल्प विरासत का धनी तोरण

- डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'-

प्राचीन मन्दिरों, महलों, बाग-बगीचों और अन्य इमारतों की एक विशेषता वहां के तोरण द्वार होते हैं। ये तोरण अपनी आकर्षक रचना के कारण दर्शकों का मन मोह लेते हैं। भारतीय कला के नियामकों ने तोरणों के रूप में सृष्टि के अनेक आकर्षकों को एकीकृत रूप में तोरण से दिखाने का प्रयास किया है और इसके नायाब नमूने सांची के तोरण हैं। हालांकि उनमें बौद्धकला अपने विकसित रूप में है किंतु उन्हीं प्रतीकों ने भारतीय कला में सोपान-दर-सोपान अपना स्थान बनाया और तोरण जनावास से लेकर देवालयों तक महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। शिल्पशास्त्रों में तोरणों की रचना के अनेक मत मिलते हैं जिनको शिल्पकारों ने अपने व्यवहार में स्वीकार किया है।

शास्त्रकारों ने तीन प्रकार के तोरण बताए हैं। मयमतम्, तंत्र समुच्चय, शिल्पर म् आदि में तीन तोरणों का विस्तृत वर्णन मिलता है : तोरणं त्रिविधं पत्रतोरणं मकरान्वितम्। चित्रतोरणमित्येषां मण्डनं त्वधुनोच्यते॥ (मयमतम् 21, 68) शिल्पकारों के प्रति निर्देश है कि गृह, प्रासाद आदि के सौंदर्य के लिए तोरण का निर्माण किया जाए। यह स्तंभ और उस पर संयोजनमूलक संधिपट्ट की रचना है। प्रायः स्तम्भ की जो ऊंचाई हो, उसको 10, 9 और 8 अंशों में विभाजित किया जाता। तीन अंश के बराबर द्वार के ऊपर के अंग के रूप में मत्स्य रूप की रचना की जाती और शेष अंशों में अनेक सौंदर्यमूलक रूप कल्पित किए जाते। तोरण चौथे अंश और स्तम्भ आधे मान से बनाए जाते। चार, पाँच या छह दण्ड के बराबर तोरण का व्यास रखा जाता।

आकृति के आधार पर तोरण तीन प्रकार के माने गए हैं (तन्त्रसमुच्चय टीका 2, 34), जिनका विवरण इस प्रकार है-

(1) पत्र तोरण : अलंकरण की दृष्टि से जिस तोरण पर वृक्षों के पत्ते, लतादि सहित दीप्तिमय आधे चन्द्रमा की रचना होती है, वह पत्र तोरण कहा जाता है। इसका आशय है कि यह ऊपर से अर्धचंद्राकार होता है और उसमें पत्रजातियाँ उत्कीर्ण की जाती है। यह सामान्य गृहों व लोक देवताओं के स्थलों पर बना हुआ मिलता है।

(2) मकर तोरण : मकर मुखादि सहित जो पांच प्रकार से वक्रीकृत होता है, वह मकर तोरण कहा जाता है। यह पांच घूमाव, चक्रों, लहरिया रेखा से युक्त बनाया जाता और उसके आजू-बाजू में मकर के मुख बनाए जाते। उसके मध्य में शिव उत्कीर्ण होते। यह नाना प्रकार के चित्रों से अलंकृत और अनेकानेक अलंकारों से विभूषित होता है। यह देवालय, विप्रावास और राजमहलों के लिए प्रशस्त माना गया है।

3. चित्र तोरण : जिस पर विविध पक्षियों की आकृतियों सहित मकर मुख का वैविध्य लिए अंकन होता है, वह चित्र तोरण माना जाता है। इस तोरण के आजू-बाजू और मध्य में भी शिव को विराजित किया जाता और वह मकरमुख से युक्त होकर भूत, विद्याधरों से चित्रित किया जाता। इसमें सिंह, हाथी, व्याल, हंसादि सहित बालक, मुक्ता ओं की माला और अन्य विविध प्रकार के सुरुचिपूर्ण चित्रों के पट्ट से विभूषित किया जाता। शास्त्रकारों ने इस तोरण को श्रेष्ठियों के गृहों की खास पहचान बताया है।

तोरणों को मांगलिक लक्षणों को धारण करने वाली स्थापत्य रचना के रूप में स्वीकारा गया है। ये मंगल प्रतीक राजप्रश्नीय सूत्र, जातक और पुराणों में समानतः मिलते हैं। इसीलिए कहा गया है कि तोरण चाहे पत्र नाम वाले हों या मकर अथवा चित्र तोरण हों, उनके मध्य और ऊपर की ओर तथा आजू-बाजू में शूल का प्रयोग किया जाता। द्वार तोरण को लोहा, लकड़ी या पाषाण से बनाया जाता। तोरण के स्तम्भ को वृत्ताकार या अन्य रुचि के अनुसार बनाया जाता। तोरण में शिखा को उसके दैर्घ्य की अपेक्षा दस, नौ या आठ भागों से बनाया जाता। तोरणों पर पताका का प्रयोग भी किया जाता। चार हाथ के बराबर, भूमि से ऊपर विस्तार के आधे तक पताका को रखा जाता है, जो देवालय के उत्तर के दैर्घ्य के प्रमाण से बनाई जाती रही है। वह पताका उस देवता के निर्धारित वर्ण के अनुसार रंग वाली होगी- तोरणानि युगहस्तमितानि क्षमोर्ध्वमर्धवितानि भवन्ति। केतवः सुरगृहोत्तरदैर्घ्याः स्वोक्त वर्णसुविचित्रपताकाः॥ (शिल्पर म् 23, 28)

तोरण के ऊपर उत्तर नामक अंग का निर्माण होता और उसके ऊपर का प्रमाण एक दण्ड का रखा जाता। तोरण के लिए वाजन का प्रमाण एक दण्ड, तीन-चौथाई भाग या आधे दण्ड के बराबर माना गया है। इसी प्रकार दल को उसके तीन भाग से और चौथे भाग से क्षेपण और उसका दल बनाया जाता और डेढ़ या सवाये दण्ड के प्रमाण से उसके ऊपर वलका की ऊँचाई रखी जाती। उस पर आठ मंगलचिह्न और उसके त्रिशिखा की रचना की जाती। इस प्रकार शिल्पर (अध्याय 23) में तोरण की रचना के निर्देश आए हैं। तोरणों पर बनाए जाने वाले अष्टमंगल के लिए यह ज्ञातव्य है कि भगवान् विष्णु के मंदिर के तोरण के लिए शंख, चक्र और ध्वज; दर्पण, वृषभ और अंकुश; चामर और मछली का जोड़ा मंगल प्रतीक माने गए हैं। तीनों देवताओं के धाम में विष्णु मंदिर बना होता तो वहां श्रीवत्स होगा और दर्पण, वृषभ, मछली का जोड़ा और पूर्णकुम्भ की रचना की जाती। श्रीश के लिए स्वस्तिक और पद्म; शंख, पूर्णकुम्भ व दर्पण होता है और उत्पल, नन्द्यावर्त और श्रीवत्स बनाया जाता। दुर्गा के चिह्न में श्रीवत्स, कुम्भ, भेरी, दर्पण, मछली का जोड़ा, अंकुश तथा शंख और नन्द्यावर्त का निवेश किया जाता।

इसी प्रकार स्कन्द के चिह्नों में पूर्णकुम्भ, ध्वज, वज्र, स्वस्तिक, शक्ति , चामर युगल, हाथी और मयूर ये आठ मंगल चिह्न बनाए जाते। दर्पण, पूर्णकलश, वृषभ, चामर का जोड़ा, श्रीवत्स, स्वस्तिक, शंख और दीपक- ये आठ मंगलचिह्न गणपति और शास्तरि के लिए हैं, जैसा कि दक्षिण भारतीय शिल्प में द्रष्टव्य है। भगवती काली के मंगलचिह्नों में तोरण पीठ पर क्रमशः खड्ग, अमृत कलश, कौशेय वस्त्र, दर्पण, पुस्तक, पुष्पमाला, ताम्बूल और ईख का अंकन किया जाता। वैसे आठ लोक मंगल प्रतीक माने गए हैं। ये लोक में प्रचलित आवसरिक तोरणों पर भी अंकित मिलते हैं- 1. दीवट (दीपिका), 2. दर्पण, 3. सुवर्ण, 4. धान्यपात्र, 5. फल, 6. दधि, 7. पुस्तक और 8. मंगलपात्र। इन लौकिक मंगल चिह्नों का अंकन तोरणों पर आज भी किया जाता है।

खोज-खबर

विविध शैली की पुतलियां

विद्वानों का कहना है कि पुतली कला का उदय भारत में ही हुआ और यहीं से यह कला और इसकी पौराणिक कथाएं दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों में फैली और प्रचलित हुईं। हमारे देश में पुतली कला के उल्लेख ईसा पूर्व के ग्रंथों में भी मिलते हैं। भारत में लगभग हर प्रकार की पुतलियां पाई जाती हैं जैसे डोरी से चलने वाली, छड़ी से चलने वाली,

ऊंगलियों पर चलने वाली तथा चमड़े की पुतलियां। पारम्परिक मानवीय रंगमंच की भांति ही पुतली रंगमंच में भी अधिकांश कथावस्तु महाकाव्यों, पुराणों तथा मध्ययुगीन गाथाओं से ली जाती है। इन दोनों रंगमंचों के बीच सदा गहरा सम्बन्ध रहा है और कथावस्तु, संगीत, वेशभूषा तथा अन्य तत्वों का आदान-प्रदान भी निरंतर होता आया है। किसी भी प्रदेश की पुतलियों की परिकल्पना आकृतियों और रंगरूप पर उस क्षेत्र में प्रचलित चित्रकला, मूर्तिकला तथा अन्य अलंकरण कलाओं का प्रभाव ही सबसे अधिक दिखाई देता है।

ऊंगलियों पर चलने वाली पुतलियों की परम्परा अब पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा, केरल तथा कुछ अन्य राज्यों में ही बची है पर डोरी से चलने वाली पुतलियों की परम्परा बहुत जगह पाई जाती है। यद्यपि उनके चलाने की पद्धतियों तथा उनकी कथाओं में काफी विविधता है। विशेषकर राजस्थान, उड़ीसा, तमिलनाडु, मैसूर और आंध्रप्रदेश में इसका अधिक प्रचार है। चमड़े की पुतिलयों का छाया-नाटक उड़ीसा, आंध्रप्रदेश, मैसूर तथा केरल में मिलता है। छाया-नाटक में विभिन्न प्रकारों में विषय और साहित्य प्रदेश विशेष की रामायणों और महाभारतों से लिया होता है। जैसे उड़ीसा में विचित्र रामायण से, केरल में कंब रामायण से, मैसूर में हनुमन्त रामायण व तोरवे रामायण और आंध्रप्रदेश में कूचिकोण्डरामायण, मोल्ल रामायण और रंगनाथ रामायण से।

इन चारों शैलियों में चमड़े की पुतलियों के आकार तथा डिजाइन में अन्तर होने पर भी उनको चलाने का ढंग प्राय: एक-सा ही होता है। सभी शैलियों में पर्दे के पीछे खड़े हुए गायक ही सारे गीत गाते हैं और अलिखित गद्य संवाद पुतलियां चलाने वाले बोलते जाते हैं।

राजस्थान की पुतलियां :

राजस्थान की कठपुतलियां काठ के एक ही टुकड़े से बनी होती हैं। उनके हाथ कपड़ा लपेट कर बनाये और अलग से जोड़े हुए होते हैं तथा लम्बे लटकते लंहगे पहनाये जाते हैं। उनके कमर से ऊपर के कपड़े तथा शिरोवस्त्र मध्ययुगीन राजस्थानी वेशभूषा से मिलते-जुलते होते हैं। हर पुतलीवाला दो या तीन पुतलियां उनकी डोरी को ऊंगलियों से बांधकर नचाता है। किसी अन्य उपकरण का व्यवहार नहीं होता।

कुंढ़ई और सखी-कुंढ़ई, उड़ीसा :

उड़ीसा में डोरी से चलने वाली पुतलियां कुंढ़ई कहलाती हैं। ये पुतलियां हल्की लकड़ी की बनती हैं और इनके पैर नहीं होते। इन्हें कमर से नीचे फहराते हुए लंहगे पहनाये जाते हैं। इन पुतलियों की वेशभूषा उड़ीसा के जात्रा रंगमंच जैसी ही होती है। राजस्थानी कठपुतलियों से भिन्न इनमें कई जोड़ होते हैं और चलाने के लिए डोरियां लकड़ी के एक तिकोने उपकरण से बांधी जाती हैं।

गोम्बेयाट्टा, मैसूर :

यक्षगान शैली की कठपुतलियां गोम्बेयाट्टा बहुत ही रीतिबद्ध शैली से बनती हैं और एकदम यक्षगान अभिनेताओं जैसी ही दिखती हैं। उन्हें चलाने की पद्धति राजस्थानी कठपुतलियों जैसी ही है। इन पुतलियों के नाटकों में कुछ प्रसंग सामान्य यक्षगान नाटकों की भांति ही प्रस्तुत किये जाते हैं।

बोम्मालाट्टम, तमिलनाडु :

तमिलनाडु के तंजबूर जिले में प्रचलित कठपुतली रंगमच बोम्मालाट्टम कहलाता है। उनमें डोरी और छड़ी दोनों प्रकार की शैलियों के तत्वों

और पद्धतियों का बड़ा सुंदर मेल है। वे बड़े कलात्मक ढंग से काठ से बनाई जाती हैं। इन पुतलियों को चलाने की पद्धति जटिल और रोचक है। हर पुतली की डोरी एक बड़ से लोहे के छल्ले में लगी होती है जिसे पुतली चलाने वाला अपने सिर पर मुकुट की तरह पहन लेता है और हाथ में दो छड़ियों की सहायता से पुतलियों के हाथों को चलाता है।

पुतुलनाच, बंगाल :

छड़ी पर चलने वाली पुतलियों की परम्परा सिर्फ पश्चिमी बंगाल में ही बची है जिसे वहां पुतुलनाच कहा जाता है। ये पुतलियां यथार्थवादी शैली में बनाई जाती हैं और इनकी वेशभूषा जात्रा नाटकों जैसी होती हैं। इन पुतलियों को चलाने का ढंग बड़ा दिलचस्प और बहुत नाटकीय है। एक बांस का पहिया जैसा चलाने वाले की कमर से कसकर बांध दिया जाता है जिस पर पुतली की छड़ रख दी जाती है और पुतली के हाथ डोरियों से बंधे होते हैं। पुतली चलाने वाले एक पर्दे के पीछे खड़े होकर बड़े नाटकीय ढंग से हिलते और नाचते हैं और इस प्रकार पुतलियों में भी वैसी ही गतियां होने लगती हैं।

दस्ताना पुतली :

पुतली-नाटक के दूसरे रूपों के समान दस्ताना पुतलियों की परम्परा भी बहुत पुरानी है। इस शैली के पुतली-नाटक उत्तरप्रदेश, पश्चिमी बंगाल,

उड़ीसा और केरल में आज भी प्रचलित हैं। उत्तरप्रदेश में तो इनका कथानक सामाजिक होता है और उसमें प्राय: देवर-जेठानी के झगड़े दरसाये जाते हैं। उड़ीसा में इनका कथानक राधा-कृष्ण का प्रेम-प्रसंग होता है। उड़ीसा शैली में पुतली-संचालन बहुत ही रोचक और नाटकीय होता है। पुतली-चालक घुटनों के बीच ढोलक दबाकर जमीन पर बैठता है और संवाद-गान करता हुआ एक हाथ से तो पुतली नचाता है और दूसरे से ढोल बजाता है। केरल में दस्ताना पुतली के कथानक कथकली नाटकों के ही कथानक होते हैं और वैसी ही पोशाक और संगीत भी।

रावण-छाया, उड़ीसा :

इस नाट्य प्रकार को उड़ीसा में रावण-छाया कहते हैं क्योंकि यह माना जाता है कि देवता होने के कारण राम की छाया नहीं पड़ती। रावण-छाया नाटकों में मध्ययुगीन उड़िया कवि विश्वनाथ

कुंथिया की विचित्र रामायण के आधार पर रामकथा ही दिखाई जाती है।

ये पुतलियां हिरन की खाल की बनती हैं। उनका रूप अधिक आदिम है और उनकी भंगिमाएं भी अधिक तीखी और नाटकीय हैं। ये पुतलियां पारदर्शी नहीं होती और पर्दे पर काली सिलहूट जैसी छाया डालती हैं। आवश्यक परिवेश दिखाने के लिए पेड़, पहाड़, रथ आदि उपकरणों का भी व्यवहार होता है। रावण-छाया की पुतलियां आकार में छोटी होती हैं और उनके कोई जुड़वां अंग नहीं होते पर उनकी छायाएं बड़ी कलात्मक और काव्यात्मक होती हैं।

तोल पावा कुतु, केरल :

केरल का छाया-नाटक तोल पावा कुतु (तोल=चमड़ा; पाव कुतु=पुतलीनृत्य) परंपरा से वर्ष में एकबार केरल के मंदिरों के वार्षिक उत्सवों में खेला जाता है जो सात से इक्कीस दिन में पूरा होता है। उसे भक्तगण मनौती के रूप में भी करवाते हैं। इसमें भी रामकथा ही दिखाई जाती है जिसका आधार तमिल की कंब रामायण है। खेल शुरू होने से पहले अनुष्ठानमूलक संगीत जिसे पूर्व रंग कहते हैं, एक तेल के दीपक के सामने प्रस्तुत होता है। ये पुतलियां भी अपारदर्शी होती हैं और पर्दे पर सिलहूट जैसी काली छायाएं डालती हैं। इन पुतलियों का एक हाथ जुड़ा हुआ होता है जो खेल में, खासकर चरित्र के आपस में बातचीत करते समय चलता हुआ दिखाया जाता है।

तोलु बोम्पलाट्टा, आंध्रप्रदेश :

आंध्र में भी छाया-नाटक का केरल जैसा ही नाम है। तोलु बोम्पलाट्टा (तोलु=चमड़ा; बोम्पलाट्टा=पुतली का नृत्य) आंध्र के छाया-नाटक की परंपरा सबसे अधिक समृद्ध और पुष्ट है। उसमें रामायण और महाभारत के प्रसंग दिखाये जाते हैं। आंध्र के छाया-

नाटकों की चमकीली रंगीन पुतलियां चारों शैलियों में सबसे बड़ी होती है। उनके कंधों, कुहनियों, घुटनों और कभी-कभी कमर और गर्दन में भी जोड़ होने के कारण वे कहीं अधिक गतियां दिखा सकती हैं।

तोगुल गोम्बे आट्टा, मैसूर :

मैसूर में छाया-नाटक का नाम है तागुल गोम्बे आट्टा (तोगुल=चूमड़ा; गोम्बे आट्टा=पुतली का नृत्य) कई दृष्टियों से यहां की परंपरा भी आंध्रप्रदेश जैसी ही है। मैसूर की पुतलियां भी उतनी ही रंगीन होती हैं और उनकी विषयवस्तु रामायण, महाभारत तथा कृष्ण कथा से ली गई होती है। मगर इन पुतलियों का आधार छोटा होता है और कई बार छोटा दृश्य 'स्थिर चित्र' की भांति एक ही आकृति में दो या तीन चरित्र प्रस्तुत करके दिखाया जाता है। ये अत्यंत सजावटी सामूहिक आकृतियां प्रभाव को सघन करने अथवा विराम सूचित करने के लिए पर्दे पर लाई जाती हैं। मैसूर शैली में कई लौकिक चरित्र तथा सामाजिक दृश्य भी होते हैं जो विभिन्न अवसरों पर काम में लाये जाते हैं।

मौत के मुंह में अमल का दोहा

इतिहास में ऐसे वीर अधिक नहीं मिलेंगे जिन्होंने रजपूती शान रखते हुए भी कभी अमल का सेवन नहीं किया किन्तु रणक्षेत्र में घायल अवस्था में भी अपने वैरी द्वारा अमल की मनुहार रखते प्राण विसर्जित किये। ऐसे रणबांकुरों में शाहपुरा के राजा उम्मेदसिंह का स्मरण हो आता है।

वह समय मेवाड़ के महाराणा अड़सीसिंह (संवत् 1817-29) का था। तब मेवाड़ बुरी तरह गृह-कलह में जकड़ा हुआ था। इस गृह कलह के मुखिया देवगढ़ के रावत राघोदास थे। उनके कहने से माधोदास सिंधिया ने अपने 35 हजार सैनिकों के साथ मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी।

शाहपुरा के राजा उम्मेदसिंह के नैतृत्व में उज्जैन में क्षिप्रा नदी के किनारे यह युद्ध बड़े पराक्रम और शौर्य के साथ लड़ा गया। इसमें मराठा सैनिकों के पैर उखड़ गये। उन्हें भागते देख मेवाड़ी सेना शहर में घुस गई तभी अचानक जयपुर से दस हजार नागा संन्यासियों की सेना आ धमकी और आव देखा न ताव बुरी तरह मेवाड़ी सेना पर टूट पड़ी। इससे सेना तितर-बितर हो गई और उम्मेदसिंह शत्रुओं को मौत की नींद सुलाते-सुलाते अन्त में स्वयं रण खेत में सो गये।

यह देख गृह-कलह के मुखिया रावत राघोदासजी की दृष्टि घायल पड़े उम्मेदसिंहजी पर पड़ी। ये उम्मेदसिंह राघोदास के काका थे किन्तु यहां सिंधिया की ओर से लड़ने के कारण उनके दुश्मन बने हुए थे। ऐसी स्थिति में भतीजे राघोदास द्वारा अपने काकाजी की पीड़ा देखी नहीं गई। पास में जाने से तो उन्हें डर लग रहा था कि मरता क्या न करता कहीं वार कर काकाजी अपने भतीजे का काम तमाम नहीं कर दें।

उन्होंने सोचा कि यदि इस वक्त अमल की डली उनके शरीर में पहुंच जाय तो उनकी पीड़ा कम हो सकती है। समय को देख वे एक कटोरे में पानी ले पहुंचे। डरते-डरते अमल की डली दी। डली के पेट में पहुंचते ही उनकी आंख खुली। उन्होंने थोड़ा पानी और थोड़ी अमल और मांगी। इससे उम्मेदसिंहजी के शरीर में थोड़ी जान आई। वे उठ बैठे। भतीजे को गले लगाया और अमल के गुणों पर यह दोहा सुनाया-

अमल कड़ा गुण मीठड़ा, काळी कंदळ वेस।
जो ऐता गुण जाणतो, सैतो बाळी वेस।।

संयोग देखिये। दोहा खत्म होते ही काका उम्मेदसिंह ने अपने भतीजे राघोदास की गोदी में प्राण विसर्जित कर दिये। मेवाड़ी वीरों की यही शान रही। युद्ध के समय एक-दूसरे के कट्टर शत्रु होते हुए भी जब घायल रणभूमि में क्षत-विक्षत स्थिति में हो और मौत उसके गले की फांस बनी हुई हो तब भाइचारे की भावना प्रबल बन कर्तव्य पथ पर मुखर होती है। ऐसे में कविता भी एक रामबाण औषध के रूप में मृत्यु का वरण कर उसे महामहोत्सव बना देती है।

रेडियोनामा : साहित्य की अभिनव विधा

'स्वप्न चुभे शूल से' नामक पुस्तक साहित्य की एक अभिनव विधा के रूप में है जिसका नाम लेखक महेन्द्र मोदी ने रेडियोनामा दिया है। पूरे 37 बरस रेडियो की नौकरी में रहकर मोदीजी ने केवल अपनी वाणी का ही वितान नहीं ताना बल्कि शताधिक रेडिया नाटक, रेडियो रूपक, झलकियां गीत, कथा गीतों की रचना कर बहुमूल्य योगदान से श्रोताओं में अपनी लोकप्रिय पैठ दी। अनेक कलाकारों के साथ अपनी भूमिकाएं दीं। जानेमाने संगीतकारों के साथ सांगीतिक सान्निधि और गाने-बजाने का सौभाग्य लिया। कलारसिकों, जॉकिजों, एन्कर्सों, उद्घोषकों तथा कम्पीयर्सों को रेडियोधर्मी शिक्षण-प्रशिक्षण से अनुप्राणित किया।

उनकी ये सब खूबियां और इस पुस्तक को पढ़कर मुझे बड़ा अचरज हो रहा है और यह अफसोस भी कि उदयपुर में रहते आकाशवाणी केन्द्र में कभी एकल काव्यपाठ, कभी काव्यगोष्ठी, कभी किसी परिचर्चा या कि समीक्षायण के दौरान लगातार मिलना होते हुए भी मोदीजी ने अपने को रेडियो की तरह बंधेबंधाये समय-क्षणों में ही क्यों लुकाये रखा।

यह पुस्तक रेडियोनामा ही है। रेडियो के नाम लिखी इसमें 31 कड़ियां संग्रहीत हैं जिनका रेडियो से धारावाहिक प्रसारण हो चुका है। इनका लेखन साहित्य की किसी विधा-विशेष की ओपमा की बजाय सभी विधाओं का सबरंग देता ओपित होता है। प्रत्येक शब्द वाणी की जादूगरी से ध्वनित ऊंजगूंज देता पाठक को जितना पठनीय बनाता है उससे भी अधिक उसका जिज्ञासु मन श्रुति से सराबोर होता टकटकी दिये रहता है। पठन से अधिक श्रवण वाला साहित्य इसीलिए अधिक स्मरणीय कहा गया है।

कहने को इसमें मोदीजी के बचपन से लेकर बी.ए. तक के आत्मकथात्मक संस्मरण हैं किंतु इन संस्मरणियों के साथ वे आगे तक की यादों को प्रासंगिक-स्मरणियां बनाते -'इसकी चर्चा विस्तार से आगे करूंगा' या 'ये कहानी मैं तफसील से इस किताब के दूसरे या तीसरे वोल्यूम में सुनाऊंगा।' लिख बरसाती बूंद सा बबोला छोड़ते, पिछली छोड़ी कहानी को पकड़ते कई तरह के मजेदार किस्सों, झलकियों, मसखरियों तथा वर्णनों के वैभव-विन्यास के साथ उन जानकारियों से भी अद्भुत और खुलकर उन्मुक्त साक्षात्कार करते-कराते हैं जिनसे अजाना पाठक अपने को समृद्ध श्रोता बन खुशवन्त महसूस करता है। कुछ उदाहरण-

(1) मैंने जब आकाशवाणी का ऑडिशन दिया था, बीकानेर के ढेरों कलाकार, बल्कि सारे कलाकार ऑडिशन देने के लिए आए थे। नाम इसलिए नहीं लूंगा क्यूंकि वो सब बहुत बड़े-बड़े नाम थे लेकिन सबके सब फेल हो गए थे। एक नाम था हनुमान पारीक। नाम से लगा कि लंबा-चौड़ा व्यक्तित्व होगा परन्तु शानदार आवाज के मालिक वो इतने दुबले-पतले थे कि फूंक मारो तो उड़ जाएं।

(पृ. 221)

(2) सन् 1970 के आसपास याद नहीं कि बीकानेर में कोई ब्यूटीपार्लर था। कॉलेज में हिस्ट्री की एक क्लास लेती पद्मा मैडम। देखने में अच्छी-भली थीं लेकिन चेहरे पर अच्छी खासी मूंछें थीं। महावीर ने सीने पर हाथ मारते कहा- 'अरे वाह रे मर्दानी मूंछें।' पूरी क्लास में हंसी का फव्वारा फूट पड़ा। महावीर फिर बोला- 'लगता है एक रेजर गिफ्ट करना पड़ेगा मैडम को।'

पीछे की बैंचों पर हम लोग बैठे हुए थे। मैडम ने हमें खड़ा कर महावीर से कहा- 'आपने कुछ कहा था?' जवाब दिया- 'नहीं, मैं तो पढ़ रहा था।' 'क्या पढ़ रहे थे?' महावीर ने पढ़ना शुरू किया- 'सन् 1857 का सवतंतरता सनगराम-सवतंतरता सनगराम को अं अं अं को अं अं अं को।' पूरी क्लास हो-हो कर हंस पड़ी। मैडम को भी हंसी आ गई।

(पृ. 255-56)

बाड़मेर-जैसलमेर की यात्राओं के दौरान पहलीबार मैंने पीवणा नामक छोटे से सांप के बारे में अजीब किस्से सुने थे कि रात को वह सोये हुए इंसान के सीने पर बैठ उसकी स्वांस में अपना जहर छोड़ पूंछ की फटकार दे जाता है। रात को ही यदि उसका इलाज हो गया तो ठीक अन्यथा सुबह होने पर उसकी मृत्यु अवश्यंभावी है।

इस संबंध में महेन्द्र मोदी ने बताया कि 'पीवणा इंसान के सीने पर बैठ अपना मुंह खोल देता है जिसमें जहर का छाला होता है जो इंसान की सांस की गर्मी पा फूट जाता है और जहर की बूंद इंसान के मुंह में टपक जाती है। रात में सब लोग सोते समय सिरहाने लूण की डलियां रखते हैं। पीछे की पूंछ की फटकार लगते ही लूण की डली मुंह में डालते हैं। यदि वह नमकीन लगे तो कोई खतरा नहीं पर मीठी लगने पर तत्काल इलाज के लिए भागदौड़ शुरू हो जाती है।'

मोदीजी ने अपने डाक्टर भाई के हवाले से बताया कि उन्होंने ऐसे कई रोगियों का इलाज कर उनकी जान बचाई। उन्होंने बताया कि रेगिस्तान में बहुत तरह के सांप होते हैं। कोई ऐसा सांप है जिसके जहर के दांत इतने छोटे होते हैं कि उनके निशान दिखाई नहीं देते। वे रोगी के लिए दो तरह के, एक कोबरा के लिए और दूसरा करैत और वाइपर के लिए। उनमें से एक इंजेक्शन लगा रोगी को ठीक कर देते हैं। उन्होंने एक अकिस केरेनेतिस सांप का जिक्र किया जिसे लोग बांडी कहते हैं। यह बहुत छोटा मगर इतना जहरीला और फुर्तीला होता है कि ऊंट पर जा रहे इंसान को भी उछलकर काट खाता है। इसका सिर काट दिया जाय तो उस सिर में भी बहुत देर तक जान रहती है। (पृ. 274-76)

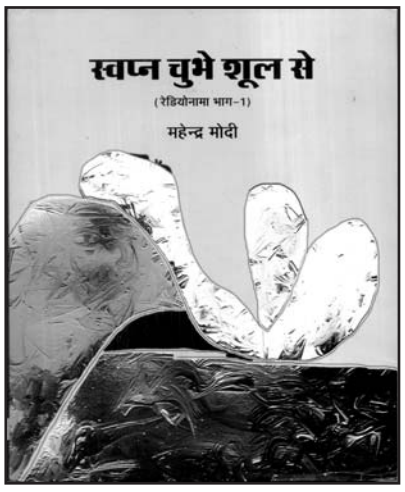

अपनी जनमभूमि बीकानेर को वे सदैव याद करते चलते हैं। कई जगह मौका निकाल वे उसका बड़ा यथार्थ, सटीक और सुहाना वर्णन करते हैं। देखिये- 'हर तरफ मिचमिचाती आंखें और सर पर रूमाल या गमछा लपेटे लोग। हर आंख रेत से कड़कड़ाती हुई। हर मुंह रेत से भरा। ये आंधी लगातार कई-कई दिनों तक चलती रहती। इसी के बीच सोना-उठना, नहाना-धोना, खाना-पीना।

जिस करवट सोये उस करवट पर शरीर के साथ-साथ रेत का छोटा सा टीला बन गया और पूरा मुंह रेत से भरा हुआ है। मगर ये रेत की काली-पीली आंधी अपने साथ एक ऐसा सौगात लेकर आती जिसकी वजह से बुरी नहीं लगती। सौगात थी गर्मी से राहत। जितने दिन आंधी चलती, हवा भी चलती और हवा चलने का मतलब गर्मी से जबर्दस्त राहत।' (पृ.14)

वर्णन में प्रवाह। प्रवाह में उछाल खाती छलांग। छलांग में मदनोत्सवी मस्ती। जैसा वर्णन वैसी शोभती शब्दावली। धारदार, ठाठदार, जानदार, शानदार खनक देती रेडियो भाषा। पुस्तक की भूमिका के बहाने सूरजप्रकाश का यह शुरूआती कथन द्रष्टव्य है- 'हर लेखक के पास बहुत सारे बिंब, स्मृतियां, दंश, खुशियां और गम होते हैं। कुछ ऐसा होता है जो किसी से बांटा नहीं होता। लगातार लिखने के बावजूद बहुत कुछ रह जाता है जो न कहा और न लिखा ही जाता है।' (पृ. 5)

रेडियोनामा का यह लेखन एस गुल्रक की तरह है जिसमें तरह-तरह के सिक्के भरे हैं और जिसे हिलाने पर सुनाई देने वाली खनकदार मीठी आवाज बड़ी मनभावन लगती है। यह भी कि उपन्यास की तरह डूबकर पढ़ते जाने का मजा लेने के साथ-साथ लेखक के सुरीले स्वप्नों को दंश देते शूल भी लगातार उनका पीछा करते लगते हैं। आकाशवाणी की नौकरी में उन्होंने जो स्वप्न देखे थे उनका चूर-चूर होता चूरन भी उन्होंने कम नहीं देखा। देखा तो यही देखा- 'पिछले दरवाजों से दाखिल हुए लोग उपमहानिदेशक से महानिदेशक की सारी बड़ी-बड़ी कुर्सियों पर काबिज होने लग गए। पूरी दुनियां में शायद इस तरह की मिसाल नहीं मिलेगी कि कोई इंसान किसी नौकरी पर लगे और बिना एक भी प्रमोशन पाये रिटायर हो जाए लेकिन आकाशवाणी में अब भी यही हो रहा था कि यूपीएससी जैसी एजेंसी से आया हुआ अफसर 30-35 बरस की नौकरी के बाद भी उसी पोस्ट से रिटायर हो जाय।' (पृ. 211)

यही नहीं, इससे भी भयंकर चुभन तब हुई जब स्वयं मोदीजी ने भी भयंकर से भयंकर भारी भरकम इस चोट को अपने पर पाया- 'आकाशवाणी कभी कला और कलाकारों का अवश्य ही पोषक रहा है मगर पिछले काफी समय से ज्यादातर इस पर अधकचरे अफसर ही काबिज हैं जिन्हें न कला की समझ होती है और न ही अफसरी की तमीज़ वरना 1991 में डेढ़-डेढ़ घंटे तक के मेरे पचासों ऐसे नाटक एक ही दिन में आकाशवाणी, कोटा के असिस्टेंट डायरेक्टर एरेंज नहीं करवा देते जिन्हें तैयार करने में कोटा के 30-40 कलाकारों ने कंधे से कंधा मिलाकर एक-एक महीने का वक्त दिया था।'

(पृ. 65)

रेडियोनामा भाग-1, कृति स्वप्न चुभे शूल से, लेखक महेन्द्र मोदी, प्रकाशक- बोधि प्रकाशन, सी-46, सुदर्शनपुरा इंडस्ट्रीयल एरिया एक्सटेंशन, नाला रोड़, 22 गोदाम, जयपुर-302006, पृ. 295, मूल्य 450 रूपये।

दो राजस्थानी पत्रिकाओं के विशेषांक

राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अकादमी, बीकानेर से प्रकाशित मासिक पत्रिका 'जागती जोत' का फरवरी-मार्च संयुक्तांक 'पर्यावरण-बसन्त' विशेषांक के रूप में है। इसके अतिथि सम्पादक डॉ. देव कोठारी हैं जो पहले इस अकादमी के अध्यक्ष भी रह चुके हैं। कुल 176 पृष्ठों में 34 लेखकों की रचनाओं से विशेषांक शोभित है। लगैडगै सभी लेखक स्थापित हैं सो उनका रचनाकर्म भी पुख्ती जानकारी लिये है। अंक में राजस्थानी भाषा के सभी अंचलों की बोलियों की चासनी मिलती है।

प्रारम्भ में अतिथि सम्पादक डॉ. देव कोठारी का कथन इस अंक को संवारने का मंतव्य देता है तदनुसार 'इण विसेसांक मांय रितुराज बसन्त, पर्यावरण संरक्षण अर सुद्धीकरण सारू आदूकाल सूं लैय नै आज तांई करीज्या जाझा जतनां रो उल्लेख हुयो है। इण अंक मांय राजस्थान रै सिरजकां प्रयास औ रैयो है कै स्तरीय रचनावां सूं जागती जोत री आ पर्यावरण रूपी जोत जन-जागरण रो काम करै। पर्यावरणीय पीठ सूं औ अंक महताऊ बणै अर साहित्य जगत में इण रो आघमान व्है।'

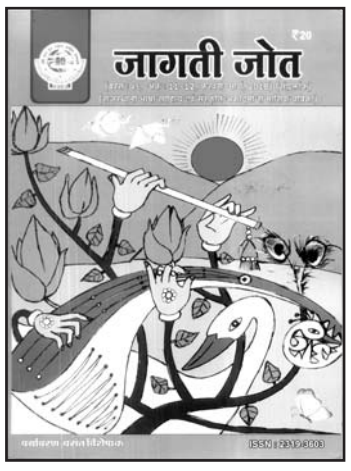

अंक का कवर आकर्षक मोहक है तथा मूल्य 20 रूपये है ताकि प्रत्येक के पास इसकी पहुंच हो सके।

तिमाही पत्रिका 'अपरंच' का यह वागड़ विशेषांक है। अतिथि सम्पादक के रूप में इसका सम्पादन वागड़ के सुपरिचित लेखक दिनेश पंचाल ने किया है। वागड़ी भाषा अथवा बोली

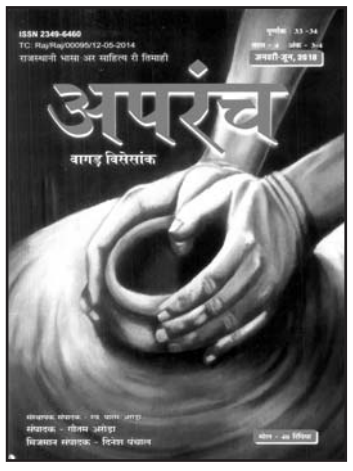

अथवा वाणी का शुद्ध स्वरूप इस अंक की रचनाओं का वैशिष्ट्य है। इससे पता चलता है कि राजस्थानी भाषा विविध रूपा है। अपरंच के सम्पादक गौतम अरोड़ा ने दो पन्ने की सम्पादकीय टीप में लिखा- 'हरेक भासा नै उण्री बोलियां अर आंचळिकता राती-माती करै। जिण भांत राजस्थानी मांय मारवाड़ी, मेवाड़ी, हाड़ौती, ढूंढ़ाड़ी, मेवाती रौ महताऊ स्थान है उणी भांत बांसवाड़ा, डूंगरपुर, प्रतापगढ़ अर उदयपुर रै हिस्सै मांय बोलीजण वाळी वागड़ी राजस्थानी साहित्य मांय आपरी न्यारी-निराळी ठौड़ राखै। वागड़ विसेसांक मांय भासाई आंचलिकता सूं कोई छेड़छाड़ नीं करीजी है। दिनेशजी री आ सम्पादन खिमता इण अंक नै पूरौ करतां थकां अपरंच नै अेक नूंवी ऊपमा दी है।' गौतम भाई को बधाई कि राजस्थानी भाषा की पिछले 30-40 बरस से आठवीं अनुसूची में सम्मिलित करने की मांग के चलते यह विशेषांक देने का साहस किया। उन्हीं से यह उम्मीद भी बन्धती है कि वे आगे जाकर अन्य आंचलिक भाषा में भी एक-एक कर विशेषांक देंगे। इससे आंचलिक भाषाओं की पहचान के साथ उनके संरक्षण स्वरूप नई पीढ़ी में सृजन को बढ़वा मिलेगा।

शब्द रंजन

उदयपुर, रविवार 01 जुलाई 2018

सम्पादकीय

बरसात में बालपन के खेल

बरसात की हल्की-हल्की फुहारों में कई सारी यादों के बीच बचपन की याद और हल्के-फुल्के गृहकार्य करते भाई-बहिन आपस में एक-दूसरे को पहेलीनुमा प्रश्न पूछते और उत्तर पाने की परीक्षा लेते। पहेली तो फिर भी सरल होती पर उत्तर खोज लाने में पसीना आ जाता।

कभी-कभी इस प्रश्नोत्तरी में हार-जीत की छोटी-मोटी शर्त भी लग जाती। समय की छूट रहती पर इतनी भी नहीं कि सामने वाले की मर्जी पर छोड़ दिया जाय। पहेलीनुमा प्रश्न कई तरह के होते। बहुत संक्षेप में, चकराने वाले, गूढ़ार्थ लिये छोटे-छोटे वाक्य, आधे वाक्य से लेकर पद्यबद्ध भी होते।

पास में बैठी मम्मी जब देख लेती कि उत्तर खोजने में मुश्किली आ रही है तो कभी इशारे में, कभी उसी के समानान्तर दूसरा प्रसंग याद दिलाकर या फिर सीधा-सीधा ही अर्थ बता देती। इस बताबती में भी कोई झगड़ा टंटा नहीं होता। उल्टे एक का अर्थ बताने पर वह दूसरी पहेली दाग देती और दोनों को उत्तर देने की छूट दे देती।

पाठकों की बुद्धि परीक्षा के लिए कुछ पहेलियां और बाद में उनके उत्तर दिये जा रहे हैं-

(1) अजड़ कमाड़ दो।
(2) बजड़ कमाड़ दो।
(3) राजा री राणी।
(4) दो दीवा बळै।
(5) एक दड़ी मोत्यां जड़ी, राजा रै खोळां में जाय पड़ी।
(6) फूल भी नीं अर फल नीं, पाना रो है तोड़ो।
(7) बांध भरोटो पाणी रो, दीधो पाथर जूण।
बांधन वाळो बांधणो ,खोळण वाळो कुण।।
(8) नर माथै नारी ऊबी, नर नारी रै हाथ।
नारी नर नै बावती, गयो पंखेरू साथ।।
(9) अकर मकर री लाकड़ी, चतरभज री जाळी।
ई प्हेली रौ अरथ करो, नीं तो रोवो दै-दै ताळी।।
(10) डूंगर बोयो लाहरौ, उगियो घेर घुमेर।
वना दांत री वाकरी, आ नै करगी ढेर।।
(11) धोळी धरती, काळो बीज।
जोवण वाळो काळियो, तैरावां के तीज।।
(12) एक रांड असी जो अना वना में जींतरा बखैर ऊभी
(13) पीळी दाख
(14) राती दाख
(15) काळी दाख
(16) लीली दाख जंगळ रो मेवो, जीमण बैठ्या सक्कर मेवो, गुठळी बायर काढ़ो जी बना
(17) सरग सीताफल लागिया म्हासूं तोड्या नीं जाय
(18) बाप बीचे, बेटो नीचे, दोयां वचै नार
(19) सुई वनां, तागा वनां पदमण बुणै रूमाल
(20) तुरत फुरत री डावड़ी तुरत रेइग्यो पेट
(21) अठै नीं, वठै नीं, दल्ली रै दरवाजे नीं, खादा है पण तोड्या नीं।

उत्तर - (1) दांत (2) होठ (3) जीभ (4)आंखें (5) दाड़िम (6)अमरबेल (7)कुआ (8) गोफण (9)चारपाई (10) कैंची (11) कागज पत्र (12) खजूर वृक्ष (13) रायणा (14) खजूरा (15) करौंदा (16) पेमली बोर (17) तारा (18) छतरी (19) मकड़ी (20) रोटी (21) ओला।

ऐसी पहेली, प्रहेली, प्याली, पारसी अनगिनत हैं। किसने गढ़ी इन्हें? इन्हें महिलाओं की धरोहर कहा जाता है। कितनी रचनाशील, कल्पनाशील, ज्ञानशील होती हैं महिलाएं? जिनके लिए कहा जाता है कि उनकी बुद्धि दिमाग के पीछे रहती है। वे नारियां जो अपने को पुरुष से, नर से किसी कदर कमतर नहीं समझती हैं।

पुरुष कहता रहे पर यह भी तो सुनने को मिलता है- 'नम्या तिलोकीनाथ राधा आगे राजिया।' यों लेखन में, शब्दों में, मात्राओं में भी नारी ही नर से भारी पड़ती है तभी तो वे जो उनकी पारसियों का अर्थ नहीं दे पाते हैं उन्हें खरा-खरा सुनाती हैं- 'खोलो जमाई म्हारी पारसी नीं तो हारो घर री नार।'

यात्रा - वृतांत

अपराजित शौर्य की सीख देता कुंभलगढ़

बड़े पुत्र शब्दांक (काकू) की जेईईई एडवांस की परीक्षा के बाद बाहर घूमने का मन बनाया। पहले मूड़ हुआ वैष्णो देवी जाने का लेकिन पहले से रिजर्वेशन नहीं होने से सभी जगह से वेटिंग लिस्ट आती रही। फिर सोचा कि एक बार कहीं पास ही जा आएं। काकू के जब दीपावली की छुट्यिां पड़ेगी तब बाहर जाया जायेगा। तुरन्त फोन पर शूरवीर भाणावत से बात हुई तो उसने कहा कि दो-तीन दिन में कुंभलगढ़ जा-आ सकते हैं। इस पर तुरन्त ही कुंभलगढ़ के लिए रवाना हुए। साथ में अग्रजा डॉ. कहानी भानावत का परिवार भी हो गया।

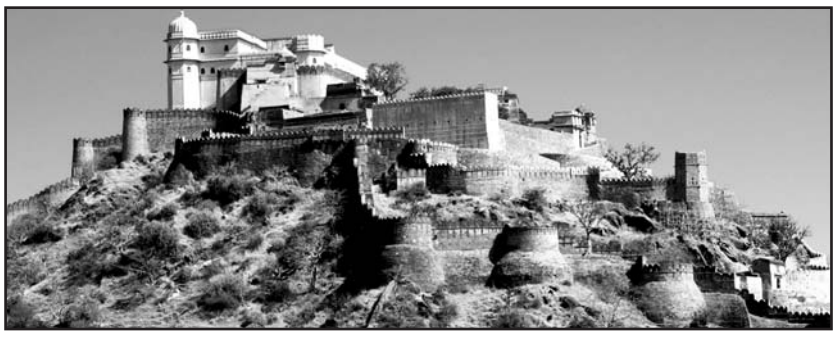

14 जून को प्रात: 10 बजे तीनों की फैमेली अपनी-अपनी कार से कुंभलगढ़ के लिए रवानी हुई। रास्ते में कंवर साहब जितेन्द्रजी मेहता ने कहा कि मेरा कार्य क्षेत्र गोगुन्दा को भी देखते हुए चलते हैं। इस पर हम गोगुन्दा के अंदरूनी इलाकों में घूमतेघामते लगभग 2 बजे कुंभलगढ़ पहुंचे। सीधे ही रेस्टोरेंट में खाना खाया। तत्पश्चात हम सभी बारह जनों, मैं, रंजना, शब्दांक, अर्थांक, डॉ. कहानी, जितेन्द्रजी, काव्या, युक्ता, डॉ. शूरवीर, डॉ. कल्पना, विश्वास तथा आदित्य ने होटल रॉयल कुंभलगढ़ विलास के स्वीमिंग पुल में दो घंटे जमकर तैराकी की। लगभग 6 बजे हमने कुंभलगढ़ किले की चढ़ाई शुरू की।

कुम्भलगढ़ का दुर्ग राजस्थान ही नहीं भारत के सभी दुर्गों में विशिष्ठ स्थान रखता है। उदयपुर से 90 किमी दूर समुद्र तल से 1,087 मीटर ऊँचा और 30 किमी व्यास में फैला यह दुर्ग मेवाड़ के यशश्वी महाराणा कुम्भा की सूझबूझ व प्रतिभा का अनुपम स्मारक है। इस दुर्ग का निर्माण सम्राट अशोक के द्वितीय पुत्र संप्रति के बनाये दुर्ग के अवशेषों पर 1443 से शुरू होकर 15 वर्षों बाद 1458 में पूरा हुआ था। दुर्ग का निर्माण कार्य पूर्ण होने पर महाराणा कुम्भा ने सिक्के डलवाये जिन पर दुर्ग और उसका नाम अंकित था। वास्तुशास्त्र के नियमानुसार बने इस दुर्ग में प्रवेश द्वार, प्राचीर, जलाशय, बाहर जाने के लिए संकटकालीन द्वार, महल, मंदिर, आवासीय इमारतें, यज्ञ वेदी, स्तम्भ, छत्रियां आदि बने है। यह किला राजस्थान के राजसमन्द जिले में स्थित है। इस दुर्ग का निर्माण महाराणा कुम्भा ने कराया था। इस किले को 'अजेयगढ़' कहा जाता था क्योंकि इस किले पर विजय प्राप्त करना दुष्कर कार्य था। इसके चारों ओर एक बडी दीवार बनी हुई है जो चीन की दीवार के बाद दूसरी सबसे बडी दीवार है। दीवार जो कि 36 किलोमीटर लम्बी तथा 15 फीट चौड़ी है।

पहलीबार एक ऐसी अद्भुत धरोहर देखकर हम रोमांचित हो गए और बड़ी देर तक मेवाड़ के अद्वितीय इतिहास और यहां के बांके वीरों के अपराजित बांकपन में खो गए। बच्चों के लिए ऐसा मनोरंजन स्थल कई दृष्टियों से मनभावन रहा।

किले का परिभ्रमण कर रात्रि लगभग साढ़े सात बजे वहीं अपनी तरह का अनूठा लाइट एंड साउंड शो देखा। इसमें चित्तौड़ से लेकर कुंभलगढ़ और उसके बाद उदयपुर बनी मेवाड़ की राजधानी और उसके शासकों द्वारा लड़े गये युद्ध, शासन कुशलता और महाराणाओं के पराक्रम तथा शौर्य का रोमांचित इतिहस साक्षात् हो आया। भोजनोपरांत आपसी गप्पबाजी और हा-हुल्लड़ का आनंद लेते हुए रात दो बजे करीब शैय्या पकड़ी। उदयपुर में गर्मी अपने यौवन पर थी पर कुंभलगढ़ का मौसम बहुत शांत, सुहावना तथा शकुन देने वाला था।

अगले दिन सवेरे होटल चेकआउट करने में हमको लगभग 11 बज गये। इससे पूर्व हमारा परशुरामजी एवं भैरों का मठ जाने का कार्यक्रम था परन्तु पूछताछ से पता चला कि परशुरामजी की चढ़ाई और उतराई के लिए प्रात: का समय ही अनुकूल रहता है। मन में कई तरह की अथल-पुथल के बीच कंवर साहब ने कहा कि गर्मी के भीषण आधिक्य के रहते भैरों का मठ देखते हुए उदयपुर लौट चलना ही सुखकर रहेगा। यह सोच हमने भैरों का मठ की ओर प्रस्थान किया।

मठ की प्रसिद्धि के बारे में मान्यता है कि यहां भगवान परशुराम महादेव ने तपस्या की थी। करण को धनुष विद्या यहीं सिखाई गई थी। बनास नदी का उद्भव भी यहीं से हुआ कहा जाता है। यहां से परशुराम महादेव पास में ही था किंतु गर्मी की परेशानी रोक रही थी।

इसे ईश्वरीय चमत्कार ही कहा

जाना चाहिये कि हममें से सभी का मन सीधे उदयपुर पहुंचने की जल्दी में था किंतु अचानक हमारे कदम सवा किलोमीटर पहाड़ी से नीचे स्थिति मंदिर की ओर चल पड़े। रास्ते में शिकंजी पीकर एनर्जी ली और जैसे-तैसे मंदिर पहुंचे। टाबरटोली में बड़ा उत्साह था। वह हमसे काफी आगे चल रही थी।

श्री परशुराम महादेव सेवा मण्डल ट्रस्ट के व्यवस्थापक खूमसिंह उठड़ एवं अंबालाल गुर्जर ने बताया कि परशुरामजी ने इसी मंदिर-गुफा में तपस्या की थी। तब गुफा में एक ब्रह्म राक्षस का बड़ा आतंक था। परशुरामजी ने उसका वध किया और वहीं कठोर तपस्या शुरू की। उसका प्रभाव यह रहा कि भगवान शिव ने माता पार्वती, गजानंद और कार्तिक स्वामी सहित परशुरामजी को दर्शन देकर चिरंजीवी रहने का वरदान दिया। यहीं गजानंदजी ने परशुरामजी को फरसा दिया। यह घटना रामायण काल से पूर्व की है। अंबालालजी ने प्रसाद स्वरूप सभी को काढ़ा सेवन करवाया जिससे शरीर में ऊर्जा का संचार हुआ। इस यात्रा में पत्रकार राहुल सोनी का विशेष योगदान रहा। यहां से खाना खाकर थके-हारे सभी उदयपुर लौटे। इस प्रकार यह दो दिवसीय यात्रा बड़े सौहार्द्र के साथ सम्पन्न हुई। -**डॉ. तुक्तक भानावत**

स्मृतियों के शिखर (55) : डॉ. महेन्द्र भानावत

बहुजन के आचार्यश्री गणेशीलालजी महाराज

जैनाचार्य गणेशलालजी शांत-क्रांति के प्रबल समर्थक, बहुजनों के उद्धारक एवं पिछड़ों के रहनुमा महापुरूष थे। ऐसे महापुरूष केवल अपनी ही आत्मा के उद्धारक नहीं होते। वे ऐसे तपस्वी भी नहीं होते जो कहीं जंगलों अथवा पहाड़ों की गुफाओं में गुपचुप तपस्या मग्न रहते हों। वे कोई अवतारी और पैगम्बर भी नहीं होते जो रहस्यमय बनकर हमारे सम्मुख आते हों और अपनी अलौकिकता से किसी को असमंजस में डाल कर अन्तर्ध्यान हो जाते हों बल्कि वे एक ऐसे संत पुरूष होते हैं जो हमारे बीच रहकर अपने सादे, सहज और साधारण जीवन द्वारा बहुजन समाज को समुन्नत जीवन जीने की प्रेरणा, सीख तथा सद्मति देते ग्रामानुग्राम पद-विहारी बने रहते हैं।

ऐसा बहुजन समाजी संत जाति-पांति, धर्म-सम्प्रदाय अथवा गांव-कस्बे की सीमा से ऊपर उठ महात्मा होता है। जैसे फूल की सुगंध सभी ले सकते हैं। नदी का पानी हर कोई पी सकता है। जंगल के फलदार पौधों से कोई भी परितृप्त हो सकता है। वैसे ही ऐसे महापुरूषों का सान्निध्य पाकर कोई भी अपने जीवन का उद्धार कर सकता है।

शांत-क्रांति के ऐसे अग्रदूतों में जैनाचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. का जन्म विश्वविख्यात झीलों की नगरी उदयपुर में विक्रम संवत 1947 की श्रावणी कृष्णा तृतीया को हुआ। पिता साहिबलालजी मारू मेदपाट मेवाड़ राजघराने के कुल देवता एकलिंगनाथ के प्रबंध विभाग में विशिष्ट अधिकारी थे। चूंकि मेवाड़ के महाराणा अपने को महाराणा नहीं मानकर भगवान श्री एकलिंगनाथ के दीवान बन राजकाज का संचालन करते थे। इस दृष्टि से भगवान श्री एकलिंगनाथ की जन-जन में अपार श्रद्धा एवं दृढ़ आस्था थी। साहिबलालजी का राजघराने में बड़ा मान था। जनता जनार्दन में भी अच्छे हाकिम के रूप में उनकी तूती बोलती थी।

भक्ति, धर्म और अध्यात्म के रंग में रंगे साहिबलालजी का परिवार भी इससे अछूता नहीं रहा। बालक गणेशीलाल पर भी ये संस्कार पड़े बिना नहीं रहे। फिर एकलिंगजी के दर्शनार्थ आनेवाले साधु-संतों, विशिष्ट महानुभावों तथा राजनयिकों के संपर्क और सान्निध्य का लाभ भी उन्हें सहज मिलता रहा। बचपन के इन संस्कारों और सत्संग के फलों ने उनके मन में एक विलक्षण वैचारिक पृष्ठभूमि को जन्म दिया फलत: वे भगवान एकलिंगनाथ की शांतिमय मुद्रा में खो गए।

वे मन ही मन सोचने लगे कि राज-पाट, वैभव-विलास और समृद्धि-सुख ; ये सब भगवान के श्रीचरणों में समर्पित हैं तब संसार का क्या अर्थ रह जाता है ? सांसारिक मोह-माया, राग-द्वेष मनुष्य के आत्म-कल्याण में बाधक हैं। अच्छे संस्कारों को जन-जन में पैदा करने और व्यर्थ की रूढ़ियों, ढकोसलों और पाखंडों का शमन करने के लिए उन्होंने एक ऐसी क्रांति की आवश्यकता महसूस की जो धर्म से प्रेरित और अहिंसक हो। इसके लिए जरूरी है कि क्रांति के सूत्रधार गृहस्थों के बीच रहते हुए भी अपने को उनसे अलग, उनसे निर्लिप्त रख मानवता का उद्धार करें।

उन्होंने यह भी महसूस किया कि हमारे धर्मग्रंथों, शास्त्रों तथा महापुरूषों की वाणियों में जो सद्प्रेरक विचार हैं, उनकी यदि जानकारी आम जनता को सुलभ कराई जाय जो उसका भी अच्छा प्रभाव पड़ सकता है। ऐसे विचारों के मंथन ने उन्हें गृहस्थ जीवन त्यागने को बाध्य किया, परन्तु सामाजिक बंधनों के कारण वे तब स्वतंत्र नहीं रह सके लेकिन विचारों की यह कसमसाहट उनके मानस में पकती रही।

पिताश्री साहिबलालजी पक्के जैनी थे और जैन धर्माचरण के प्रति उनके मन में प्रगाढ़ आस्था थी। साधु-संतों के दर्शनार्थ जाना, उनके व्याख्यान सुनना और धर्म-लाभ लेना उनके जीवन की नियमित चर्या थी। माताश्री इंद्राबाई भी पिताश्री के ही सदृश धार्मिक संस्कारों से परिपूर्ण थी। उनका अधिकाधिक समय साधु-संतों के दर्शन, व्याख्यान-श्रवण तथा जैनत्व जीवन-दर्शन में व्यतीत होता था।

गणेशाचार्य की प्रारंभिक शिक्षा उदयपुर में ही हुई। लेखन तथा पठन-पाठन में उनकी बचपन से ही विशेष दिलचस्पी थी। वे कुशाग्र बुद्धि के धनी और प्रतिपल कुछ नया जानने और सीखने की ललक लिये रहते थे। इसी कारण लघु वय में ही उन्होंने मेवाड़ी, हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी का अध्ययन कर लिया किन्तु समाज के बंधन के रहते 14 वर्ष की उम्र में ही वे विवाह-सूत्र में बांध दिये गए। यों सगाई तो चार वर्ष की उम्र में ही वहीं के एक मेहता परिवार की बालिका के साथ कर दी गई थी। विवाह के पश्चात 'व्यापारे वसति लक्ष्मी' के अनुरूप गृहस्थ जीवन के दायित्वों का निर्वहन कर उन्होंने व्यावसायिक जीवन में प्रवेश किया और अपनी विशिष्ट पहचान बनाई।

माता-पिता के साथ मुनि-दर्शन के लिए जाने तथा उनके उपदेशों को आत्मसात करने में बालक गणेश कभी पीछे नहीं रहे। धीरे-धीरे वे समाज की आंखों के तारे बन गए। यह एक अद्भुत संयोग ही कहा जाना चाहिए कि पिता और पुत्र दोनों ही अपने आत्मोत्थान हेतु संसार-सागर से विरक्त होने की प्रबल मनसा धारे हुए थे परन्तु दोनों एक-दूसरे से अभिज्ञ थे। दोनों संसार की असारता को महसूस कर चुके थे और यह निश्चय कर चुके थे कि मनुष्य जीवन की सार्थकता सांसारिक व्यामोह के त्यागने में है। सच्चा सुख और आत्मिक शांति के लिए साधु-जीवन ही श्रेष्ठतम जीवन है।

यह बात उस दिन प्रत्यक्ष हो गई जब वैराग्य के भावोद्रेक में उनके पिताश्री ने आचार्यश्री श्रीलालजी म. सा. से संसार से विनिर्मुक्त होने अर्थात दीक्षा ग्रहण करने का आत्म-निवेदन किया। इस पर आचार्यश्री ने साधु जीवन की कठिनाइयों तथा साधना की कठोर बारीकियों से उन्हें अवगत कराया। यह भी कहा कि वैचारिक दृढ़ता और अडिग संकल्प-शक्ति के अभाव में साधुजीवन अंगीकार करनेवाला न साधु बन पाता है और न गृहस्थ जीवन के साथ ही न्याय कर पाता है। इस समय बालक गणेशीलाल भी वहां उपस्थित थे। उनके पिता आचार्यश्री के प्रश्नों के जवाब में कुछ कहें उससे पूर्व ही वे बोल उठे- 'आचार्य प्रवर! जब भगवान महावीर निर्भीक रहे तो क्या उनकी संतान दु:खों और संकटों से भयग्रस्त रह सकती है ?'

आचार्य श्रीलालजी ने बालक गणेशी का साहस और हिम्मत भरा यह कथन सुना तो उन्हें लगा कि यह बालक कोई साधारण बालक नहीं है। उनके मन पर ध्रुव, प्रहलाद, और गजसुकुमार जैसे बालकों की छवि उभर आई। उन्होंने गणेशी से पूछा 'क्या तुम भी अपने पिता के साथ दीक्षा लोगे ?' गणेशी ने निर्भयतापूर्वक कहा- 'क्यों नहीं! आचार्यदेव! मैं भी अवश्य दीक्षा लूंगा।

बालक की ऐसी दृढ़ता और संकल्प-शक्ति को देखकर आचार्य श्रीलालजी ने साहिबलालजी से कहा- 'आपका यह बालक आगे जाकर जैन समाज को सुदृढ़ नेतृत्व देगा। यह होनहार है। मैं इसके उज्ज्वल भविष्य के कई चरण देख रहा हूं। ऐसा भी समय आ सकता है जब यह समाज की सुदृढ़ एकता का नियोजन एवं संयम की साधना का कठोर प्रतिपालक बने। मुझे इसमें उच्चता के कई लक्षण दृष्टिगोचर हो रहे हैं।' अपने बालक के संबंध में आचार्यश्री के मुखारबिन्द से ऐसी वाणी सुन साहिबलालजी फूले नहीं समाए। उनके मन में कई प्रकार के विचार तरंगित होने लगे और उल्लास का अतिरेक ठाठे मारने लगा।

काल की गति बड़ी विचित्र होती है। इसे न कोई समझ सकता है और न अपने अनुकूल-प्रतिकूल ही बना सकता है। उन्हीं दिनों उदयपुर में प्लेग का एक ऐसा प्रकोप आया कि उसकी चपेट में कइयों के साथ बालक गणेशी के माता-पिता भी आ गए। बहुतेरा इलाज कराने पर भी वे स्वास्थ्य लाभ नहीं कर सके और अन्ततोगत्वा दोनों असमय ही काल कवलित हो गए। यही नहीं, इसी प्लेग की चपेट में आकर उनकी बहिन और धर्मपत्नी भी जाती रही।

कहां एक भरापूरा सुखमय परिवार और कहां देखते-देखते सबकुछ उजड़ा-उजड़ा सा व्यर्थ का जीवन होता भार! क्या सबकुछ छलावा है। जीवन की सारी कल्पनाएं, उमंगें और रंगीनियां स्वप्न की तरह क्षणभंगुर हैं। मनुष्य की क्या यही विडम्बना है कि वह हंसते, मुस्कराते तो कभी रोते, विलाप करते अपनी गति से स्वयं भी बेहाल रहता है। वह क्या हो जाय, कुछ भी पता नहीं चलता।

एक तिनके सा जीवन न जाने कब कहां किस ओर प्रयाण कर जाय, कुछ भी नहीं कहा जा सकता। ओस की तरह मनुष्य का आना और देखते-देखते विलुप्त हो जाना, क्या यही उसकी नियति है। ऐसे अनेक संकल्प-विकल्पों में गणेशी का मन घनीभूत अवसादों में डूब गया परन्तु उसने जरा भी हिम्मत नहीं हारी। जो घटनाएं घटीं उन्हें जीवन का एक क्षेपक मात्र मान विस्मृत कर दिया। हर घनीभूत अंधेरे के बाद प्रात: की एक प्रकाशवान किरण फूटती है।

उन्हीं दिनों आचार्यश्री जवाहरलालजी का उदयपुर में चातुर्मास हुआ। गणेशी उनके संपर्क में आकर अपने संयम मार्ग अपनाने के संकल्प को और सुदृढ़ कर सके। एक दिन आचार्यश्री को उन्होंने अपने माता-पिता, बहिन, पत्नी आदि के दुखद अवसान की जानकारी दी और कहा कि अब वे अकेले हैं। इस पर आचार्यश्री बोले- 'तब संसार में क्या रखा है।'

आचार्यश्री से यह सुनते ही जैसे उन्हें आत्म-बोध हो गया। फलस्वरूप उन्होंने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत की प्रतिज्ञा एवं चौविहार आदि सकन्ध को स्वीकार किया। साथ ही साधु-जीवन अंगीकार करने के अपने दृढ़ निश्चय को दोहराया। घड़ी की सुई अब तक उन्हें दुखदाई स्थिति में ही डुबोये चल रही थी किन्तु उसी सुई ने उन्हें मनवांछित फल प्राप्ति का आधार प्रदान कर दिया। अवसर पाकर इन्हीं आचार्यश्री से गणेशी ने दीक्षा ग्रहण कर साधुजीवन अंगीकार कर लिया।

मुनिश्री गणेशीलालजी ने जवाहराचार्य के सान्निध्य में रहकर संस्कृत, प्राकृत आदि भाषाओं के साथ न्याय, व्याकरण, साहित्य, अध्यात्म, दर्शन आदि का गहन अध्ययन और व्यावहारिक चिंतन द्वारा जीवन के सार्थक स्वरूप को तलाशना प्रारंभ किया। धीरे-धीरे श्रावक-श्राविकाओं और साधु-साध्वियों में उनकी सुधर्मी प्रवृत्तियों का प्रभाव फैलने लगा। आचार्यश्री जवाहरलालजी का इन पर पूरा वरदहस्त था ही। साधुत्व के पूर्ण संस्कारी जीवन और साधना के चारित्रिक क्रिया-स्वरूपों के चतुर्दिक प्रभाव का ही परिणाम रहा कि जावद में संवत् 1990 की फाल्गुन शुक्ला तृतीया को आप 'युवाचार्य' बना दिये गए और एक दशक बाद जब आचार्यश्री जवाहरलालजी का स्वार्गारोहण हो गया तब भीनासर में आपश्री को 'आचार्य पद' से अलंकृत कर चतुर्विध संघ ने अपने को गौरवमंडित किया।

युवाचार्य गणेशीलालजी आचार्य गणेशीलालजी बन गए तो उनकी धर्म-क्रांति ने एक नया मोड़ लिया और कई ऐसे चमत्कारिक कार्य कर दिखाये जिनका प्रभाव न केवल जैन समाज पर पड़ा अपितु इतर समाज भी बड़ा लाभान्वित हुआ। आपका पहला चातुर्मास देशनोक में हुआ। यहां देवी करणी का विश्व-प्रसिद्ध मंदिर है। चूहों वाली इस देवी को तब पशु बलि दी जाती थी। आचार्यश्री को यह ठीक नहीं लगा। उन्होंने अपने व्याख्यानों द्वारा बार-बार यह स्पष्ट किया कि जो देवता सबका कल्याण करता है वह अपने लिए किसी भी निरीह प्राणी की हिंसा नहीं चाहेगा। यह एक ऐसा विचार था जो देवी करणी के उपासक चारणों में घर कर गया।

एक दिन वह आया जब सबने मिलकर आचार्यश्री के समक्ष पशु-बलि नहीं देने का संकल्प लिया। इससे मूक पशुओं को अभयदान मिला। एक दृष्टि से यह एक ऐसी क्रांति थी जिसे करने का साहस दिखाना ही बहुत बड़ा खतरा मोल लेना था परन्तु आचार्यश्री ने अपने शांतिमय अहिंसक उद्बोधन और व्यक्तित्व की प्रभावना में यह कर दिखाया। इस रूप में आचार्यश्री की यह एक ऐतिहासिक अहिंसक धर्मचेतना से संदर्भित अविस्मरणीय देन कही गई।

एक और बहुत बड़ा क्रांतिचेता काम आचार्यश्री द्वारा स्थानकवासी सम्प्रदाय के विभिन्न सम्प्रदायों के विलीनीकरण का रहा। अजमेर में हुए साधु-सम्मेलन में प्रमुख संत-आचार्यों द्वारा जो गहराएं पारित की गईं उनमें धीरे-धीरे शिथिलता, स्वच्छन्दता एवं निरंकुशता व्याप्त होने लगी। तब एक ऐसे प्रभावी व्यक्तित्व की तलाश हुई जो सबको एकजुट कर सके। इसके लिए घाणेराव सादड़ी में एक वृहत् साधु-सम्मेलन आयोजित किया गया। इसमें स्थानकवासी बाईस सम्प्रदाय के 53 प्रतिनिधि एवं 341 साधु तथा 768 साध्वियां सम्मिलित हुईं। सबने मिलकर गणेशाचार्य को श्रमण संघ का उपाचार्य नियुक्त किया।

आचार्यश्री ने देखा कि उनसे जो उम्मीद की जा रही है, उसकी पूर्ति होना संभव नहीं लग रहा है और उनकी आत्म-साधना और समता-संयम में भी बाधा पड़ सकती है अत: उन्होंने अपने को मुक्त कर लिया परन्तु चतुर्विध संघ का उनके प्रति जो अटूट स्नेह रहा उससे उन्हें आखिर में च्चुक्म सम्प्रदायज्ञ के शासन की बागडोर संभालनी पड़ी।

सामाजिक कुरीतियों एवं थोथे आडम्बरों पर आचार्यश्री की चोट बड़ी गहरी रहती थी। धर्म के नाम पर अधर्म और अहिंसा के नाम पर हिंसा को वे कतई बर्दाश्त नहीं करते थे। फलौदी का चातुर्मास पूरा कर जब वे माउड़िया गांव पधारे तो पता चला कि वहां देवी-स्थल पर सामूहिक रूप में पांच सौ पशुओं की बलि दी जाती है और लगभग पन्द्रह सौ पशु व्यक्तिगत भेंट चढ़ाये जाते हैं।

यह सुन आचार्यश्री का दिल दहल उठा। धर्म के नाम पर इस तरह की हिंसा को वे कैसे बर्दाश्त कर सकते थे परन्तु उसका प्रतिकार करना भी मामूली बात नहीं थी। आचार्यश्री ने उस पूरे गांव के लोगों के बीच अहिंसा, मानवता, पाप-कर्म तथा पशु-पक्षियों की मनुष्य के प्रति आस्था एवं विश्वास को लेकर जो उपदेश दिया उसका असर उस गांव के जनजीवन पर तो पड़ा ही लेकिन संपूर्ण प्रकृति भी जैसे उनके उपदेशों से धन्य हुई लगने लग गई। ऐसा कुछ जादू हुआ कि देवी-भक्तों का हृदय परिवर्तन हो गया।

सब ओर प्रेम, दया, करुणा, ममता और मैत्री का वातावरण फैल गया। गांव के निवासियों ने संगठित हो आचार्यश्री के सम्मुख आत्म-समर्पण किया तथा भविष्य में किसी प्रकार की पशु-बलि नहीं देने की शपथ ली। ऐसी शांत-क्रांति आचार्यश्री जैसे महापुरूष ही कर सकते थे अन्यथा तो वहां इस बात को कहना ही खून खच्चर और भयानक हिंसा को मोल लेना था।

-शेष पृष्ठ सात पर

पैसिव म्यूचल फंड में निवेश करना अधिक लाभकारी

उदयपुर। निवेशकों को कम लागत वाले पैसिव फंड में निवेश हेतु आकर्षित करने के लिहाज से डी.एस.पी. ब्लैक रॉक म्यूचल फंड के सीनियर वाइस प्रेसिडेंट अनिल घेलानी ने बताया कि एक्टिव म्यूचल फंड के अलावा पैसिव म्यूचल फंड में निवेश करना अधिक लाभकारी सिद्ध होता है। वर्तमान में भारत में म्यूचल फंड एवं इक्विटी बाजार 22 लाख करोड़ का है, जो तीव्र वृद्धि कर रहा है, क्योंकि भारत में जीडीपी के अनुपात में म्यूचुअल फंड वर्तमान में एकल अंकों में है जबकि अमेरिका जैसे बाजारों में यह 100 प्रतिशत से भी अधिक है।

घेलानी के अनुसार डी.एस.पी. पैसिव फंड में निफ्टी की 50 बेंच कम्पनियों में प्रति कंपनी 2 प्रतिशत राशि के हिसाब से निवेशक की पूंजी निवेश की जाती है। इस तरह के म्यूचल फंड शुरू करने के बारे में काफी रिसर्च करने के बाद हमने यह पैसिव फंड गत वर्ष अक्टूम्बर में शुरू किया था जिसमे करीब 20,000 निवेशकों का अभी तक 150 करोड़ रु. निवेश हो चुका है। जब हमने अपना पहला पैसिव फंड, डीएसपी ब्लैकरॉक इक्वल निफ्टी 50 फंड लॉन्च किया, तो निवेशक के पोर्टफोलियो में लार्ज-कैप इक्विटी तक पहुंच बनाने के उद्देश्य से इसे 'कॉम्प्लिमेंट्री' का दर्जा दिया और इसे प्रतिस्पर्धात्मक रणनीति के रूप में नहीं रखा। 2025 तक पैसिव निवेश कुल एयूएम का लगभग 25 प्रतिशत या लगभग 40 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर हो जाएगा।

द योगा इंस्टीट्यूट राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित

उदयपुर। द योगा इंस्टीट्युट, सांताक्रुज (पूर्व), मुंबई को वर्ष 2018 में योग के प्रोत्साहन एवं विकास हेतु दिये गये उल्लेखनीय योगदान के लिए प्रतिष्ठित प्रधानमंत्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। द योगा इंस्टीट्युट ने 'संगठन - राष्ट्रीय' श्रेणी में यह पुरस्कार जीता। अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस के अवसर पर इस पुरस्कार की घोषणा से बेहतर कोई और मौका नहीं हो सकता था और संस्थान के लिए यह इसलिए भी खास है कि क्योंकि वर्ष 2018 में यह अपना शताब्दी वर्ष मना रहा है। वर्ष 1918 में योगेन्द्रजी द्वारा स्थापित द योगा इंस्टीट्युट ने 25 दिसंबर, 2017 को 100 वर्ष पूरे कर लिये।

इस संस्थान से 50,000 से अधिक योग शिक्षक निकल चुके हैं और अब तक यहां से 500 से अधिक प्रकाशन हो चुके हैं, जिसने स्थानीय एवं अंतर्राष्ट्रीय दोनों ही समाज के प्रत्येक वर्ग के लिए समग्र योग के प्रोत्साहन एवं विकास में योगदान दिया है।

ज़िंक 'डन एण्ड ब्रैडस्ट्रीट' से सम्मानित

उदयपुर। हिन्दुस्तान जिंक को नॉन-फैरस एण्ड प्रेसियस मेटल्स क्षेत्र की श्रेणी में बेस्ट कार्पोरेट के लिए प्रतिष्ठित 'डन एण्ड ब्रैडस्ट्रीट कार्पोरेट अवार्ड-2018' से सम्मानित किया गया है। यह सम्मान वित्त राज्यमंत्री शिवप्रताप शुक्ला ने प्रदान किया। जिंक़ की ओर से यह पुरस्कार रितेश बंसाली, कार्पोरेट फाईनेन्सियल कन्ट्रोलर एण्ड विजय मूर्ति, उप-मुख्य मार्केटिंग ऑफिसर ने ग्रहण किया।

इस अवसर पर डन एण्ड ब्रैडस्ट्रीट के प्रबन्धक निदेशक- मनीष सिन्हा एवं सीनियर कंपनी ऑफिसर जूलीयन प्रोवर भी उपस्थित थे। जिंक़ के हेड-कार्पोरेट कम्यूनिकेशन पवन कौशिक ने बताया कि यह पुरस्कार हिन्दुस्तान जिंक़ द्वारा सम्पूर्ण बिज़नेस में उत्कृष्ट क्रियान्वयन हेतु उठाये गये प्रभावी उपायों की मान्यता को दर्शाता है।

एन इनसाइट कार्यक्रम में अनुपम खेर

उदयपुर। मैं स्वयं के अनुभवों से प्रेरित हूं और आज भी मैं शिमला का बिट्टू होना पसंद करता हूं। एक्टर अनुपम खेर को कंधे पे उठाएं नहीं घूमता। जड़ों से जुड़ा रहना पसंद करता हूं। आप भी अगर जीवन में सफल होना चाहते हैं तो आपको आपकी कमजोरियों से छोटा बनाने वालों से बचना चाहिए। ये विचार अभिनेता अनुपम खेर ने हिन्दुस्तान जिंक़ यशद भवन में आयोजित एन इनसाइट कार्यक्रम में व्यक्त किए।

उन्होंने कहा कि अपने सपनों को साकार करने के लिए उन्हें देखना ही नहीं वरन् उन्हें पूरा करने के लिए कड़ी मेहनत करने की ज़रूरत है। अपनी आकांक्षा और चाहत बच्चों पर थोपनी नहीं चाहिए। उनके परिवार ने कभी उन्हें कुछ भी बनने के लिए बाध्य नहीं किया। उनके पिता ने उनका परीक्षा परीणाम अपेक्षा के अनुरूप नहीं आने पर उनका सेलिब्रेशन किया।

उन्होंने कहा कि जब उन्हें मुंबई में कड़े संघर्ष के बाद भी काम नहीं मिल रहा था और सारांश फिल्म में महेश भट्ट द्वारा वीवी प्रधान की भूमिका के लिए चुने जाने के बाद अचानक मना करने पर वे मुंबई छोड़कर जाने लगे तो उनके पिताजी ने उन्हें प्रेरित करते हुए कहा कि भीगा हुआ आदमी बरसात से नहीं डरता।

उन्होंने यह बात भट्ट साहब को सुनायी और यहां तक कह दिया कि यह रोल उनसे अच्छा कोई नहीं कर सकता। बाद में इस रोल के लिए उन्हें ही अवसर मिला। यह किरदार उनके जीवन का अहम किरदार साबित हुआ।

प्रारंभ में अनुपम खेर, मुख्य वन संरक्षक इंद्रपालसिंह मथारू, खान एवं भूविज्ञान के अतिरिक्त निदेशक मधुसुदन पालीवाल, जिंक़ के मुख्य कार्यकारी अधिकारी सुनील दुग्गल, मुख्य वित्तीय अधिकारी अमिताभ गुप्ता, सीओओ पंकज कुमार सहित वरिष्ठ प्रबंधन ने दीप प्रज्जवलन कर कार्यक्रम का शुभारंभ किया।

छात्र लॉ में बनाएं करियर

उदयपुर। आज के दौर में सब क्षेत्रों में लगातार बदलाव हो रहे हैं। इस बीच छात्र कानून यानि लॉ में अच्छा करियर बना सकते हैं। यूपीईएस स्कूल ऑफ लॉ में प्रोफेसर और डायरेक्टर तबरेज़ अहमद का कहना है कि टेक्नोलॉजी ने लीगल इंडस्ट्री को पूरी तरह बदल दिया है, ऐसे में आने वाले सालों में लॉ की प्रेक्टिस में कई नए क्षेत्र उभरेंगे। लीगल इंडस्ट्री में इन बदलावों के कारण छात्र कई नए क्षेत्रों में करियर बना सकते हैं जैसे लीगल नॉलेज इंजीनियर, लीगल टेक्नोलॉजिस्ट, लीगल हाइब्रिड प्रोफेशनल, लीगल प्रोसेस एनालिस्ट, लीगल प्रोजेक्ट मैनेजर, लीगल रिस्क मैनेजर आदि। एलएलएम, एनर्जी लॉ/ बिज़नेस लॉ/ इंटरनेशनल इकोनोमिक लॉ/ लॉ एण्ड टेक्नोलॉजी में स्पेशलाइज़ेशन के साथ यूपीईएस स्कूल ऑफ लॉ भारत में लॉ के सबसे बड़े स्कूलों में से एक है। यह लॉ की पढ़ाई करने वाले छात्रों को साइबर कानूनों तथा इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी अधिकार कानूनों में स्पेशलाइज़ेशन के साथ पढ़ाता है। यूपीईएस स्कूल ऑफ लॉ के छात्र कई राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में 170 से अधिक पुरस्कार जीत चुके हैं।

ऋण की सुलभता बढ़ी

उदयपुर। मार्च 2018 में समाप्त वर्ष में भारत के खुदरा ऋण बाजार में महत्वपूर्ण रूप से बढ़ोत्तरी हुई। बैलेंस में वर्ष 2017 की पहली तिमाही से वर्ष 2018 की पहली तिमाही के बीच 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई और समान अवधि में बकाया खातों की संख्या में 32 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई। ट्रांसयूनियन सिबिल के रिसर्च एवं कंसल्टिंग के वाइस प्रेसिडेंट, योगेन्द्र सिंह ने बताया कि प्रति उधारकर्ता ऋण बैलेंस अधिकांश ऋण उत्पादों के लिए पिछले वर्ष की तुलना में सामान्य रूप से बढ़ा। यह निष्कर्ष वर्ष 2018 की पहली तिमाही के ट्रांसयूनियन सिबिल इंडस्ट्री इनसाइट्स रिपोर्ट में दिया गया है, जिसमें ऑटो लोन, उपभोक्ता ऋण, क्रेडिट कार्ड्स, होम लोन, पर्सनल लोन और प्रोपर्टी पर लोन सहित विभिन्न खुदरा ऋण उत्पादों की प्रवृत्तियों एवं प्रदर्शनों का खुलासा किया।

दवाइयों के बैन से किसानों की बढ़ेंगी मुसीबतें

उदयपुर। एक समय पहले तक न सिर्फ दुनियाभर में भारत की पहचान कृषि से थी बल्कि यह क्षेत्र देश को आर्थिक मज़बूती भी देता था लेकिन अब सरकारी असक्षमताओं के चलते किसान के परिवार, खेतों में काम करने वाले मज़दूरों की स्थिति बहुत दयनीय हो गई है। यही वजह है कि पिछले कुछ समय से किसानों के आंदोलन और आत्महत्याओं का सिलसिला लगातार बढ़ता जा रहा है।

अब सरकार का नया फैसला राजस्थान और मध्य प्रदेश के किसानों को बुरी तरह से प्रभावित कर सकता है। हाल ही में सरकार ने अफीम अल्कालोइड से बनने वाले सुरक्षित कोडीन आधारित खांसी के सिरप को बैन करना प्रस्तावित किया है। अगर यह लागू हुआ तो अफीम की खेती करने वाले किसानों की रोज़ी रोटी तक छिन सकती है।

सरकार ने स्वास्थ्य परिवार और परिवार कल्याण मंत्रालय के अंतगर्त विशेषज्ञों की कमेटी बनाई है जो कोडीन आधारित दवाइयों से जुड़ी सुरक्षा, प्रभाविकता और चिकित्सकीय प्रामाणिकता की समीक्षा करके जुलाई के शुरूआत में बैन से जुड़े अपने फैसले के साथ रिपोर्ट जमा करने को तैयार है।

कमेटी कोडीन आधारित खांसी के सिरप बैन करने पर विचार कर रही है जबकि खांसी के ये सिरप क्लिनिकली सुरक्षित है और ड्रग कंट्रोल जनरल ऑफ इंडिया (डीसीजीआई) ने साल 1995 में इसे मंजूरी दी है। सूत्रों के हवाले से पता चला है कि स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा कोडीन आधारित खांसी के सिरप बैन करने की वजह इसका ग़लत इस्तेमाल होना है परंतु तथ्यों पर गौर करें तो कोडीन आधारित खांसी के सिरप दशकों से दुनियाभर में सूखी खांसी मैनेज करने के लिए गोल्ड स्टैंटर्ड दवाई मानी जाती रही है। दवाई पर बैन लगने से रोगियों के इलाज का बेहतरीन विकल्प खत्म हो जाएगा।

वोडाफोन रेड प्लान्स के साथ एमज़ॉन प्राइम मेंबरशिप

उदयपुर। एमज़ॉन और वोडाफान ने घोषणा की कि वोडाफोन रेड के पोस्टपेड उपभोक्ता बिना किसी अतिरिक्त लागत के एक साल के लिए एमज़ॉन प्राइम मेंबरशिप (999 रु कीमत) का लाभ उठा सकते हैं- जिसके माध्यम से उपभोक्ता एमज़ॉन डॉट इन पर एक्सक्लुज़िव डील्स के साथ सर्वश्रेष्ठ ऑनलाईन एंटरटेनमेन्ट और शॉपिंग, प्राइम वीडियो, प्राइम म्युज़िक तथा हज़ारों आइटमों की अनलिमिटेड फ्री फास्ट शिपिंग का लाभ उठा सकते हैं।

अवनीश खोसला- एसोसिएट डायरेक्टर कन्ज़्यूमर बिज़नेस, वोडाफोन इण्डिया ने कहा कि आज के डिजिटल प्रेमी उपभोक्ता हर चीज़ में पूरी आज़ादी और फ्लेक्सिबिलिटी चाहते हैं। हमारी यह साझेदारी उपभोक्ताओं को सर्वश्रेष्ठ कन्टेन्ट का लाभ उठाने की आज़ादी देगी। इसके माध्यम से वे जब चाहें, जहां चाहें हज़ारों फिल्मों, वीडियो, टीवी शो और संगीत का आनंद पा सकेंगे। वोडाफोन रेड और एमज़ॉन प्राइम उपभोक्ताओं को खरीददारी एवं मनोरंजन का बेहतरीन अनुभव मिलेगा। उपभोक्ता वोडाफोन प्ले ऐप से एमज़ॉन प्राइम मेंबरशिप एक्टिवेट कर सकते हैं। सपोर्टेड डिवाइसेज़ पर प्राइम वीडियो ऐप डाउनलोड कर उपभोक्ता प्राइम वीडियो का लाभ उठा सकते हैं। इसी तरह एमज़ॉन प्राइम म्युज़िक ऐप डाइनलोड कर बेहदतरीन म्युज़िक का लुत्फ़ भी उठा सकते हैं। अक्षय साही, डायरेक्टर एवं हैड, एमज़ॉन प्राइम इण्डिया ने कहा कि हम वोडाफोन के साथ जुड़कर बड़ी संख्या में उपभोक्ताओं तक एमज़ॉन प्राइम के फायदे पहुंचा सकेंगे। वोडाफोन के पोस्टपेड उपभोक्ता अब एमज़ॉन प्राइम के ज़रिए खरीददारी और बेजोड़ मनोरंजन का लाभ उठा सकेंगे।

'मेरापेशेंट' ऐप रखेगा मेडिकल रिकार्डस

उदयपुर। 'मेरापेशेंट' ऐप , केमिस्ट्स और डायग्नॉस्टिक्स केंद्र के लिए एक एग्रीगेटर प्लेटफॉर्म है जहां उपयोगकर्ता अपने दवा का पर्चा अपलोड कर सकते हैं और अपनी दवाओं और टेस्टों के लिए सर्वोत्तम मूल्य पर उचित सेवा प्राप्त कर सकते हैं। ऐप के फाउंडर मनीष मेहता ने बताया कि मेरापेशेंट एप पर अपलोड किया गया पर्चा, एप के मेडिकल रिकॉर्ड कॉलम में सेव हो जाता है जिसे किसी भी वक्त उपयोग में लिया जा सकता हैं। मेडिकल टेस्ट हो जाने पर, डायग्नॉस्टिक्स केंद्र द्वारा जाँच कि रिपोर्ट भी मेरापेशेंट एप पर अपलोड की जा सकती है जिसके जरिए उपयोगकर्ता के आने जाने के खर्चों में कमी व समय की बचत की जा सकती हैं।

ग्रामीण इलाकों के रोगियों को अच्छी स्वास्थ्य सेवाऐं पाने के लिए, काफी दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। डॉक्टर का पर्चा, जांच रिपोर्ट के गुम हो जाने पर दोबारा डॉक्टर को दिखाना, जांच कराने से खर्चा बढ़ जाता है। वहीं दूसरी और, ऐप के माध्यम से केमिस्ट की दुकान से दवाइयां मंगवाने पर या डायग्नोस्टिक लैब्स पर टेस्ट बुक कराने पर विभिन्न छूट भी मिलती हैं जिससे उपयोगकर्ताओं को फायदा पहुंचता हैं। व्यापक सर्वे एंव रिसर्च कर हेल्थकेयर को आम आदमी तक पहुंचाने और केमिस्ट्स ,डायग्नॉस्टिक्स केंद्र और उपयोगकर्ताओं से जुड़े स्वास्थ्य देखभाल क्षेत्र की संतुलित पर्यावरण प्रणाली बनाने और विकसित करने के लिए 'मेरापेशेंट' ऐप का निर्माण किया गया।

वे दिन और वे.....

(पृष्ठ एक का शेष)

इस श्रृंगारित तैयारी से पूर्व बच्चे स्वयं उनकी शादियां तय कर लेते थे। उनके पीछे माताओं-पिताओं की पूर्ण सहमति एवं स्वीकृति रहती थी। बच्चे स्वयं बाजार से सब सामग्रियां खरीदते थे। उनका विधिवत् हिसाब रखते थे। घर की समस्त लिपाई-पुताई एवं सफेदी करते थे।

जिस घर में ढूला-ढूली की शादी रचाई जाती थी, उस पर स्वयं बच्चे चितराम मांडते थे अथवा उन पर सांस्कृतिक हाथी, घोड़े, कलश एवं आरतीधारिणी पुतलियां तथा चंवर और छत्रधारी द्वार-रक्षक बनाते थे। इस काम में आवश्यकतानुसार तत्संबंधी प्रवीण कलाकारों से सहयोग लेते थे। शादी के निमंत्रण अत्यंत सुंदर ढंग से कागज पर स्वयं लिखकर अपने मित्रों में बांटते थे। शादी से पूर्व और बाद के जितने भी औपचारिक एवं आनुष्ठानिक भोज आदि होते थे उनके पकवान बच्चे स्वयं बनाते थे।

ढूला के घर बरातियों के बैठने आदि की अत्यंत कलात्मक व्यवस्था की जाती थी तथा ढूली के घर मांडा सजाया जाता था। तोरण वांधने की समस्त व्यवस्था की जाती थी तथा बच्चे स्वयं तोरण बनाते थे। दूल्हे के घर से बकायदा बरात सजाकर बच्चे दुल्हन के घर पर जाते थे जहां तोरण की रस्म पूरी की जाती थी। अत्यंत कलात्मक ढंग से सजाये हुए मंडप में ढूला-ढूली बिठाये जाते थे। हवन-यज्ञ आदि हुआ करते थे तथा कहीं-कहीं सम्पन्न घरों में तो यह विवाह ज्योतिषी द्वारा संपन्न कराया जाता था। उस समय यह भी धारणा थी कि ढूला-ढूली के अत्यंत सफल एवं आनंददायी विवाह बच्चों के सुखद एवं सफल भावी वैवाहिक जीवन के द्योतक भी हैं। कहीं-कहीं तो इस सुखद कामना के लिए ढूला-ढूली का विवाह संस्कारवत भी अनिवार्य समझा जाता था।

ढूला-ढूली का यह विवाह केवल एक ही दिन में समाप्त नहीं हो जाता था। जिस तरह आज से कई वर्ष पूर्व राजस्थानी विवाहों में पूरा एक महीना लगता था उतनी ही अवधि ढूला-ढूली के विवाह में भी लगती थी। ये विवाह बहुधा गर्मी में रचाये जाते थे। काफी समय पूर्व विवाह की बातें चलती थीं। पूर्ण निश्चय होने के बाद ढूला वाले अपने घर में विवाह की तैयारी करते थे और इसी तरह ढूली वाले के घर में भी सब साज-सज्जाएं जमाई जाती थीं। जेवर, वेशभूषा, मिठाई आदि का लेने-देन भी उसी तरह होता था जिस तरह वास्तविक मानवी विवाह में होता है।

ढूला-ढूली के घर पर शादी के गीत लड़कियों द्वारा उसी तरह गाये जाते थे जिस तरह मानवी विवाहों में प्रौढ़ स्त्रियों द्वारा गाये जाते हैं। इन बालिकाओं को विवाह संबंधी गीत याद करने पड़ते थे तथा उन्हें समस्त रीति-रिवाज से अवगत रहना पड़ता था। ढूला-ढूली के ये विवाह किसी समय बच्चों के खाली जीवन के लिए प्राण थे। उनका सारा समय किसी न किसी उपयोगी रचनात्मक कार्य में लगा ही रहता था। अधिकांश में लड़कियां ही ये सब विवाह रचाती थीं तथा लड़के घर की बनावट, सफाई, पुताई तथा रंगाई आदि में मदद करते थे। यही नहीं सारे घर के प्रौढ़ स्त्री-पुरुष भी इन ढूला-ढूली के विवाहों में व्यस्त हो जाते थे।''

- रंगायन, 1974, संपादक डॉ. महेन्द्र भानावत, पृ. 16-20

न केवल राजस्थान में अपितु राजस्थान के बाहर भी ये ढूला-ढूली बड़े लोकप्रिय रहे हैं। तुलसी विवाह की तरह इन गुड्डे-गुड़ियों के विवाह में भी हजारों रूपये आज भी खर्च किये जाते हैं। कहीं-कहीं तो इनका विवाह नए विवाह से भी सवाया, अधिक साजसज्जा, रस्म अदायगी और अच्छे विधि-विधानपूर्वक समाप्त होता है। इस संबंधी पत्रों में प्रकाशित दो खबरें देना यहां उचित होगा-

गुड्डे-गुड्डियों का विवाह :

कानपुर। यहां सफेद कॉलोनी जूही में छेदी की अम्मा की गुड़िया व बग्गड़ के गुड्डे का विधिवत विवाह हुआ। बारात निकाली गई। आतिशबाजी हुई। द्वारचार, जलपान, विवाह, दानदक्षिणा, दहेज, नृत्यगान व विदा के कार्य सम्पन्न हुए और अब वधू को वापस लाने की तैयारियां जारी हैं। हजारों लोगों ने इस विवाह में किसी न किसी रूप में शिरकत की। - राष्ट्रमित्र, 20 जून 1971

गुड्डे-गुड्डी की शादी में 15 हजार खर्च :

सांगली महाराष्ट्र 30 अगस्त (यूएनआई)। राजीव तथा श्यामा की कल यहां धूमधड़ाके और तड़क-भड़क के साथ शादी हो गई। बारात में सजे हुए हाथी, घोड़े और ऊंट भी थे। इनके अलावा बाजा बज रहा था। वर तथा वधू अच्छी पोशाक में थे। ये यहां के किंडरगार्डन में स्कूल में पढ़ने वाली भाग्यश्री तथा विजयसिंह के गुड्डे-गुड़िया थे।

दुल्हन की मां सांगली के भूतपूर्व शासक विजयसिंह राजे की तीन वर्षीया लड़की है। इस शादी पर सिर्फ 15 हजार रूपये खर्च हुए। नवविवाहित जोड़े को भेंट में सोना तथा चांदी मिला। लगभग 500 व्यक्तियों को निमंत्रित किया गया था जिसमें दुल्हन की मां की लगभग दो सौ सहपाठी भी थीं। उन्होंने दावत खाई और आशीर्वाद दिया। -राजस्थान पत्रिका, 30.8.1971

विवाह का यह विधिविधान यहीं समाप्त नहीं हो जाता। ढूलीबाई को सुसराल पहुंचाने के बाद पुन: उसे पीहर लाई जाती है और इस खुशी में घर-घर लड्डूओं के लेणे बांटे जाते हैं। आज इन ढूले-फूंत्यों का इतना चलन नहीं है तो स्वाभाविक है, बच्चों में भी वह कलादृष्टि और जीवन-कौशल नहीं रहा। ढूला-ढूली के विवाह नहीं रचते हैं तो आगे जाकर बच्चों के वैवाहिक परिणाम भी सामने आ रहे हैं। जिन्होंने अच्छे तन-मन से ढूली-फूंत्ये रमाये हैं वे अपने जीवन में भी अच्छी तरह रमते-थमते देखे गये हैं परन्तु जिन्होंने इनका कभी नाम-ठाम ही नहीं सुना उनका तो अल्ला ही मालिक है।

-म. भा.

बहुजन के आचार्यश्री.....

(पृष्ठ पांच का शेष)

ऐसी ही हृदयद्रावक घटना बड़ीसादड़ी के चातुर्मास में घटी जब वहां के राजराणा के काकाश्री भीमसिंह आचार्यश्री के दर्शनार्थ आये। आचार्यश्री के उपदेशों से काकाश्री इतने प्रभावित हुए कि उस धर्मसभा में स्वेच्छा से मद्य-मांस त्यागने तथा शिकार नहीं करने के सौगंध लिये। बड़ीसादड़ी ठिकाने की ओर से नवरात्रि में देवी जगदम्बा को 45 बकरों तथा एक भैंसे की बलि दी जाती थी। भीमसिंह ने इसे बंद करवाया साथ ही अन्य स्थानों पर भी जगह-जगह जो बलि दी जाती थी उसे बंद कराने के आदेश जारी कर दिये। भीमसिंह ने अन्य जागीरदारों को भी आचार्यश्री के दर्शन करने को प्रेरित किया और उन्हें भी अहिंसा, दया, करुणा तथा जीव-रक्षा का सहभागी बनाया।

राष्ट्र चेतना की विकासधारा में भी आचार्यश्री का कम योगदान नहीं रहा। अछूतों का उद्धार करने, गरीबी तथा ऊंच-नीच का भेद मिटाने, अंधविश्वासों और सामाजिक रूढ़ियों के खिलाफ अपनी आवाज बुलंद करने में वे किंचित भी पीछे नहीं रहे। उन्होंने हरिजनों को गले लगाया और उन्हें सुसंस्कारी बनाने के लिए जैनत्व धारण कराया। दलितों और पतितों के प्रति भी उनकी पूरी हमदर्दी रही। अपने विहार और विचरण के दौरान वे उनकी झोंपड़ियों में गए और उनके बीच वार्तालाप कर उन्हें कुटैवों से निजात दिलाई। वे जैनधर्म को जन-जन का धर्म बनाने के हिमायती थे।

उनकी मान्यता में जो सु-जन है वही जैन है। जो जैन है वह सु-जन भी है और जिसे सु-जन बनना है उसे जैनत्व को स्वीकारना है। इसी भावना के फलस्वरूप हिन्दू, मुसलमान, सिख, इसाई सभी उनके संपर्क में आये और प्रभावित हुए बिना नहीं रहे। सत्य और अहिंसा में ही आचार्यश्री मानवता की सारी समस्याओं का हल मानते थे। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय होड़ और दौड़ को लेकर जो समस्याएं मुंह बायें खड़ी हैं उनका निराकरण भी इन्हीं में खोजा जा सकता है। आचार्य विनोबा भावे भी उनके संपर्क में आये और उनकी विचारधारा से बड़े प्रभावित हुए।

धर्म को आचार्यश्री ने राजनीति से सदा दूर रखा। उनका मानना था कि राजनीति में धर्म का समावेश तो राष्ट्र का उत्थान कर सकता है परन्तु धर्म में राजनीति का समावेश बाधा ही उत्पन्न करेगा। धर्म की क्रांति धर्म के ताने-बाने से ही गुथी हुई होनी चाहिए। राजनीति की उथल-पुथल समाज को बदलाव नहीं दे सकती। वह धर्म-क्रांति ही है जो बहुत कुछ बदलाव ला सकती है। यही कारण है कि उन्होंने कभी राजा-महाराजाओं, जागीरदारों, सेठों और कुबेरों की ओर मुख नहीं किया और न उनके महलों, हवेलियों और बंगलों में गए और न अपनी धर्मसभा ही उनके लिए आयोजित की।

दिल्ली के अपने चातुर्मास में राष्ट्रपति भवन में भी उन्होंने यह कहकर जाने से मना कर दिया कि साधु तो स्वयं 'महाराज' होता है। वह आत्मार्थी होकर राजाओं का भी राजा बन जाता है। ऐसे राजाओं का राजा जब साधु है तो उसे राजभवनों, महलों और अट्टालिकाओं में जाने की कहां आवश्यकता है? उन्होंने कहा भी- 'मेरे लिए वे स्थान ज्यादा महत्वपूर्ण हैं जहां की धर्मसभा में सभी वर्ग और धर्म के व्यक्ति एक साथ बैठ सकें। किसी स्थान विशेष को प्रमुखता देने में मेरी कोई रूचि नहीं है।'

सर्वजन के लिए आचार्यश्री के उपदेश सुगम तथा हृदयग्राही होते थे। वे व्यावहारिक जीवनधर्मी शिक्षा तथा सुनीतिपरक गुणों से भरपूर रहते थे। विभिन्न दृष्टांतों के माध्यम से वे किसी विषय को बहुत ही रोचक तथा सरल ढंग से समझाते हुए जो बात कहते उसका हृदय पर सीधा प्रभाव पड़ता और मनन करने को प्रत्येक व्यक्ति की चिन्तना चल पड़ती। ईश्वर की सत्ता और प्रभुता में उनका पूर्ण विश्वास था। वे परमात्मा की किसी वंदना की एक पंक्ति का भाव और अर्थ लेकर अपनी बात प्रारंभ करते और उसी पर सारा व्याख्यान केन्द्रित करते हुए अनेक उद्धरणों और कथा-किस्सों से सबको मुदित मोहित कर देते।

उनके व्याख्यान की यह भी विशेषता थी कि वे अंत में किसी महापुरूष के जीवन चरित्राख्यान का वाचन करते। धारावाहिक रूप से ऐसी ढालों में सत्यवादी राजा हरिश्चंद्र की ढाल अत्यंत लोकप्रिय हुई। आचार्यश्री उसकी विशिष्ट गायकी में लवलीन हो जाते। उनके साथ पूरी धर्मसभा भी अपना स्वर देकर रस विभोर हो जाती। कथा-कथन और श्रवण का वैसा माधुर्य अब कहीं देखने को नहीं मिलता।

आत्मा के तीन स्वरूपों- अन्तरात्मा, बहिरात्मा और परमात्मा की व्याख्याओं पर वे अधिक जोर देते और नाना प्रसंगों से उसका विशद विश्लेषण करते हुए मनुष्य को विविध कषायों, विसंगतियों, विषमताओं तथा विवेकहीन कार्यों से मुक्त होने का संदेश देते। सुख और शांति के लिए वे अन्तरात्मा की करणीयता को सर्वोपरि मानते। इस संबंध में उनका यह कथन बड़ा महत्वपूर्ण है- 'अन्तरात्मा जीव काया आदि का साक्षी होता है। वह काया के सुख में सुखी नहीं और काया के दु:ख में दु:खी नहीं होता। काया की दुर्बलता में दुर्बल और सबलता में सबल नहीं मानता। इंद्रियां अपने-अपने विषय को ग्रहण करती हैं, परन्तु अन्तरात्मा जीव उदासीन रहता है। न उसके लिए कोई मनोज्ञ विषय होता है, न अमनोज्ञ। राग-द्वेष की परिणति का परित्याग करके वह समभाव का आनंद अनुभव करता है। वह अपनी आत्मा को दृष्टा-मात्र अनुभव करता है। वह शरीर से संबंध रखने वाली माया से और विभिन्न संबंधों से अपने आपको अलिप्त मानता है।'

गणेशाचार्य का व्यक्तित्व बड़ा प्रभावी और यशोमंडित था। एक प्रभामंडल सा उनके व्यक्तित्व के इर्दगिर्द छाया रहता था जिसके कारण उनके संपर्क में आनेवाला हर व्यक्ति उनका भक्त बन जाता था। आज यह बात विशेष रूप से कही जाती है कि युवावर्ग धर्म से विमुख होता जा रहा है परन्तु गणेशाचार्य इसके अपवाद ही थे। उनके उपदेशों में युवकों के लिए भी बहुत सारी बातें रहती थीं जिनके कारण यह वर्ग धर्म के प्रति और ज्यादा श्रद्धा, भक्ति और निष्ठा से जुड़ता हुआ परिलक्षित होता था।

सैंकड़ों युवकों को उन्होंने धर्म-क्रांति का शांति-पथ दिया। उनकी ऊर्जा को मानव धर्म की सेवा और समर्पण में लगाया परन्तु अवसर आने पर ऐसे युवकों को खरी सुनाने में भी उन्होंने कोई कसर नहीं रखी जिनका जीवन धार्मिक चेतना और संस्कारों से परे जाता पाया। कई अवसरों पर तो उन्होंने अपने व्याख्यान ही युवकों की राष्ट्रीय, सामाजिक और पारिवारिक भूमिका में योगदान को लेकर दिये। इससे युवकों को अपने उद्देश्यों और लक्ष्यों को प्राप्त करने का मनोबल मिला। आज ऐसे कई युवाजन समाज के लिए अगणी बने हुए हैं।

पहली बार मैंने बीकानेर में आचार्यश्री के 1956 के चातुर्मास में दर्शन किये। मैं वहां अगरचंद भैरोंदान सेठिया जैन पारमार्थिक संस्था में रहकर कॉलेज में पढ़ने जाया करता था। मेवाड़ के और भी साथी थे। सेठियाजी की कोटड़ी हमारे पास ही थी जहां आचार्यश्री बिराजे हुए थे। प्रतिदिन प्रात: उनके दर्शन करना, छुट्टी के दिन व्याख्यान सुनना, विशिष्ट अवसरों पर सामायिक, प्रतिक्रमण, उपवास, एकासना, आयाम्बिल करना हमारी प्रमुख चर्या रहती थी। धार्मिक अध्ययन करना और उसकी परीक्षा देना तो लाजमी था ही।

यह अध्ययन पं. श्यामलालजी ओझा तथा पं. घेवरचंदजी बांठिया 'वीरपुत्र' के जिम्मे रहता था। पं. श्यामलालजी अच्छी कद-काठी का भरापूरा व्यक्तित्व लिये थे। संस्कृत-प्राकृत के वे प्रकांड पंडित और महाज्ञानी थे। घेवरचंदजी अत्यंत ही सरल प्रकृति के साधुजन थे। उन्होंने अनेक जैन सूत्रों का संपादन किया जिनका प्रकाशन भी पारमार्थिक संस्था से ही हुआ। जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड पाथर्डी से प्रतिवर्ष मैंने धार्मिक परीक्षा दी और अच्छे अंकों से उत्तीर्ण हो रजत पदक भी प्राप्त किया। आगे जाकर घेवरचंदजी ने पंडितजी महाराज की संप्रदाय में दीक्षा ग्रहण करली। उनके साधु जीवन में, उदयपुर में मैंने उनके दर्शन भी किये।

चातुर्मास के दौरान और पूरे पर्युषण काल में तथा विशिष्ट दिनों में लगातार आचार्यश्री गणेशीलालजी के व्याख्यान सुनते। सामायिक प्रतिक्रमण करते। उपवास आयाम्बिल करते। आचार्यश्री व्याख्यान के बाद ढाल-कथा प्रारंभ करते। एक विशिष्ट गायकी में उनकी ढाल-कथा में राजा हरिश्चंद्र की ढाल सर्वाधिक चर्चित और लोकप्रिय हुई जिसका मुखड़ा था- 'इन्द्र यों बोले गजसुकुमार, मनुष्य लोक में हरिश्चंद हैं सतवादी सांचा'

यह ढाल सबके कंठों पर बड़ी मधुराई के साथ चढ़ी हुई थी। जब सबका सामूहिक स्वर बड़ी दिल्लगी और तन्मयता से गावणी पकड़ लेता तब आचार्यश्री श्रोता बन मन ही मन बड़े मुदित लगते।

अंतिम बार मैंने आचार्यश्री के दर्शन उदयपुर में किये। जब-जब भी मैंने उनके दर्शन किये वे बीकानेर की याद करते और मेरे सेवा-कार्य तथा पठन-लिखन की जानकारी लेते। उस दिन मेरे साथ पं. पूर्णचंदजी दक के सुपुत्र हरिश्चंद्र थे जिन्हें हम हरिभाई ही कहते। हरिभाई मेरे गांव कानोड़ के ही थे और बीकानेर में भी हम सहपाठी थे।

आचार्यश्री ने उनके पांव में मौजे पहने देखे तो उनसे कई सवाल कर डाले। पंडितजी के लड़के होकर मौजे पहनना उन्हें ठीक नहीं लगा। हरिभाई ने तत्काल मौजे उतार पेंट की जेब में रख दिये। बात छोटी थी मगर हरिभाई को गहरी जा लगी। वे यों भी सादगीपूर्ण जीवन के अभ्यासी थे पर उस दिन से उन्होंने अपना रहन-सहन और संयमित कर लिया। ऐसे कितने ही युवक थे जिन पर आचार्यश्री का अमिट प्रभाव पड़ा।

अत: कहा जा सकता है कि आचार्यश्री गणेशीलालजी म. सा. ने शांत-क्रांति के उद्बोधक के रूप में जो संदेश जन-जन को दिया उससे मानवता का बहुत बड़ा हितचिंतन हुआ और उन मूल्यों की प्रतिष्ठा भी हुई जो किसी भी समाज, देश और राष्ट्र के लिए शाश्वत कहे जा सकते हैं।

कान्यो-मान्यो

बालश्रम रौ कावड़ पाठ

कान्यो दो दन तांई बालश्रम री एक कार्यशाला मांय पोंचग्यो। वठै वींरौ एक कावड़ बांचणिये भाट बावजी सूं परिचै करायो। वींरी कावड़ देख कान्यो कावड़ वाचो वणा'र वींनै प्यार कीधौ। कार्यशाला रे दूजै दन केई बड़ा साब आया। भाटजी कावड़ बांची।

वींरौ बाचण सगळा सूं सवायो रियौ। साब लोग भूरी-भूरी, लाल-पीली, नारंग्यां नै केसर वरणी भांत-भांत री परसंसा कीधी जदी भाट बावजी हाथ जोड़ इनाम लेती वगत क्यो कै माराऊं वधोतरी मैणत तो कान्याजी री है जणां मनै पानो लिखर कावड़ रो पाठ रटायो नै बांचण री तरकीब बताई। ई खातर म्हूं म्हारो सगळो इनाम कान्याजी नै दैवण खातर वांनै मंच माथै आवण नै नूतो देऊं।

साब बोल्या, भाटजी थांरो इनाम तो थांणै पांई राखौ। म्हैं कान्याजी ने भी थारै साथै सनमान दैवणो चावां। कान्याजी मंच माथै आया। वांनै टीलो काड़ पागड़ी बंधाई। खांधा माथै शॉल सराई नै नकद राशि रो लिफाफो दीधौ। वीं टैम समारो मांय मान्यो कठूं आव परो। वो वींरै गळे लागग्यौ। कान्ये भाटजी कन्ने सूं पानो लीधो। मान्यो बांचण ढूक्यो। सगळा फैर सुणवा लागा नै कान्या-मान्या री जैजैकार हुवण लागी। कावड़ बाचण रौ पाठ इण मुजब हो-

– पैली समरूं सरसती दूजो देव गणेश।
तीजो सरवण सुत भलो जय-जय भारत देश।।

– यो सरवण कुण?

वोई जो आपणी कावड़ मांय आपणां आंधा मां-बाप नै बिठाय तीरथां कराई। वींरो नाम आखा जुग में अम्मर हुयो तो गाम-गाम वींरी कावड़ बंचै।

– या कावड़ कांई हुवै?

या कावड़ एक मंदरिया है। कावड़िया भाट इन्नै बगल मांय लै'र मोरपंख री छुवण दै घर-दीठ-घर जावै अर धरम री कावड़ बांचै। वो बोलै-

-सारे जहां से अच्छा हिन्दोसतां हमारा।
टाबर यहां का सरवण मां-बाप का सहारा।।

अणीज खातर आपणो देश आखी दनियाऊं आछो केवायो। अठारो हर टाबर सरवण पूत है जो आपणां मावड़-बावड़ री भगवान ज्यूं सेवा करे।

– कलजुग रा है तीन देव गुटखा बीड़ी चाय।
यां सूं बचियो सब जणां जीवन कर दे हाय।।
-छोरो घर रो दीवलो छोरी नी है फंद।
यो घर दीपै आपणो वा पण देय सुगंध।।
– बालाश्रम में भेज बाल ने श्रम सूं राखो दूर रे।
खेलै कूदै मौज मनावै भणै पड़ै भरपूर रे।।

शिशु के लिए मां का दूध सर्वश्रेष्ठ : डॉ. सरीन

उदयपुर। टीकाकरण, नवजात शिशुओं की सेहत की जांच और हाल ही में बच्चे को जन्म देने वाली माताओं को प्रसव के बाद देखभाल की अहमियत पर शिक्षित करने के लिये बेबी केयर ब्रांड हिमालया बेबीकेयर द्वारा शुक्रवार को हेल्थ केयर एजुकेशन प्रोग्राम 'माई बेबी एण्ड मी' इंटरैक्टिव सेशन का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में 150 से अधिक माताओं ने भाग लिया।

मुख्य वक्ता बालरोग विशेषज्ञ डॉ देवेंद्र सरीन ने कहा कि नवजात शिशुओं के लिये नियमित स्वास्थ्य जांच बहुत महत्वपूर्ण होती है। बच्चों को बीमारी से बचाने के लिये टीकाकरण एक सबसे जरूरी उपाय है, जो उनके माता-पिता कर सकते हैं। माई बेबी एण्ड मी पोस्टनैटल केयर, पोस्टपार्टम फैमिली प्लानिंग और ब्रेस्टफीडिंग के बारे में प्रमुख संदेश देने का एक अवसर भी देता है।

डॉ सरीन ने बताया कि अधुरा पोषण कमजोर इम्यून सिस्टम का खतरा बढ़ाता है। एक शिशु के लिए मां का दूध सर्वश्रेष्ठ है। इसमें सभी ज़रूरतपूर्ण विटामिन और मिनरल मौजूद होते हैं। जब शिशु छह महीने का हो जाए तो उसे सॉलिड खाना खिलाना शुरू किया जाय जो उसके बढ़ते पोषण और विकास की ज़रूरतों को पूरा करने में सक्षम होता है।

श्री एन. वी. चक्रवर्ती, बिजनेस हेड, हिमालया बेबीकेयर एंड फॉर मॉम्स, द हिमालया ड्रग कंपनी ने कहा कि माता-पिता के पास आमतौर पर अपने बच्चे की सेहत, सोने के तरीकों, शिशु की मालिश इत्यादि के संबंध में कई सवाल होते हैं और वे इनका सही जवाब ढूंढने की कोशिश करते रहते हैं।

'माई बेबी एंड मी' पहल माताओं के लिये एक मंच है, जहां पर वे डॉक्टरों और दूसरी माताओं के साथ चर्चा करती हैं। इसके माध्यम से उन्हें अपनी सेहत और अपने बच्चे की स्वास्थ्य संबंधित चिंताओं का समाधान करने का मौका मिलता है। 'माई बेबी एंड मी' के माध्यम से हमारा इरादा माताओं को शहर के प्रमुख डॉक्टरों के साथ बातचीत करने का अवसर उपलब्ध कराना है। ये डॉक्टर्स उन्हें उनकी समस्याओं का समाधान एवं आश्वासन प्रदान कर सकते हैं।

सुनीता बेंगानी ज्ञानशाला की क्षेत्रीय प्रभारी बनीं

पिछले दिनों श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सभा ज्ञानशाला द्वारा श्रीमती

सुनीता बेंगानी को क्षेत्रीय प्रभारी बनाये जाने के उपलक्ष्य में उनका भावभीना अभिनंदन किया गया। ज्ञानशाला निदेशक फतहलाल जैन ने बताया कि पिछले 22 वर्षों में सुनीताजी ने ज्ञानशाला के संचालन द्वारा अनेक बालक-बालिकाओं को मूल्यपरक कहानियों के माध्यम से जीवन निर्माणकारी संस्कारी शिक्षण देकर जीवन विज्ञान जनित मूल्यों को स्थापित किया है। उनके मूल्यवान अवदान को देखते हुए ज्ञानशाला की सामान्य सभा ने उन्हें क्षेत्रीय प्रभारी नियुक्त किया है। इसी क्रम में प्रेक्षा प्रभारी से क्रमोन्नत सहसंयोजिका संगीता पोरवाल को भी सम्मानित किया गया।

सुनीताजी ने बताया कि मै प्रारंभ में ज्ञानशाला की प्रेक्षा प्रभारी बनी। उसके बाद सहसंयोजिका और फिर संयोजिका के रूप में कार्य किया। अब क्षेत्रीय प्रभारी के रूप में मेरा कार्य-विस्तार हुआ है। उदयपुर के बाहर जगह-जगह अन्यत्र भी मुझे ज्ञानशाला की स्थापना कर ग्रामीण बालक-बालिकाओं को प्रशिक्षित कर संस्कारी बनाना है। इसके लिए सर्वप्रथम गोगुन्दा तथा कानोड़ का चयन किया गया है।

सभा के दौरान छहों ज्ञानशालाओं की प्रभारी क्रमशः सुनीता नंदावत, हेमलता इंद्रावत, संगीता चपलोत, सीमा मांडोत, सीमा कच्छारा तथा चंद्रा पोखरना ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की साथ ही आगामी चातुर्मास के दौरान ज्ञानार्थी शिविर, प्रशिक्षिका शिविर, पिकनिक, ज्ञानशाला दिवस आदि की रूपरेखा तय की गई।

वर्ष 2018-19 के लिए संगीता चपलोत एवं प्रतिभा इंटोदिया का सहसंयोजिका के रूप में चयन किया गया। इस अवसर पर नवनिर्वाचित सभाध्यक्ष सूर्यप्रकाश मेहता एवं मंत्री प्रकाश सुराणा को ज्ञानशाला की गतिविधियों से अवगत करवाया गया।

गौरीकान्त सहायक निदेशक, पवन पीआरओ बने

उदयपुर। राजस्थान जनसम्पर्क सेवा के नवपदोन्नत अधिकारी गौरीकान्त शर्मा ने सहायक निदेशक एवं पवन शर्मा ने जनसम्पर्क अधिकारी का कार्यभार संभाल लिया। सरकार ने हाल ही विभागीय पदोन्नति समिति की बैठक आयोजित कर 36 जनसम्पर्क सेवा के विविध पदों पर पदोन्नति की जिसमें

उदयपुर के दोनों अधिकारियों को पदोन्नत करते हुए अग्रिम आदेश तक के लिए उदयपुर जिला जनसम्पर्क कार्यालय में पदस्थापित रखा गया।

प्रो. भंवर शर्मा नहीं रहे

उदयपुर। कलाविद और लेखक प्रो. भंवरलाल शर्मा का 27 जून को देहावसान हो गया। नाथद्वारा के राजकीय महाविद्यालय के प्राचार्य पद से सेवानिवृत्त हुए श्री शर्मा शिक्षाविद्, चित्रकार और छायाकार थे। वे लगभग 94 वर्ष के थे और कुछ समय से अस्वस्थ थे। उन्हें शिल्प और स्थापत्य की विशेष जानकारी थी और इसी कारण उन्होंने विश्वकर्मीय विद्या के ग्रंथों के विवेचन में रूचि ली। डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' के साथ उन्होंने कई महत्वपूर्ण कला विषयों के ग्रन्थों के अनुवाद किये। उन्होंने अपनी आत्म कथा भी लिखी। अशोक नगर शमशान घाट पर 28 जून को उनका अंतिम संस्कार हुआ। जहां नगर के कई कलाप्रेमी, साहित्यकार आदि मौजूद रहे।

वीडियो कॉल पर डॉक्टर की मौजूदगी से हेल्थकेयर सेक्टर में क्रांति

उदयपुर। भारत में इंटरनेट के बढ़ते उपयोग के साथ देश स्टार्टअप्स के जरिए ग्राहकों के व्यवहार में परिवर्तन लाकर विभिन्न परंपरागत क्षेत्रों के विस्फोटक विस्तार का एक विशाल मैदान बन चुका है। पहले, यह लड़ाई ई-कॉमर्स के लिये देखी गयी जिसके प्रमुख खिलाड़ी फ्लिपकार्ट, स्नैपडील और अमेजन हैं; फिर लॉजिस्टिक मैनेजमेंट स्टार्टअप्स की बारी आई; उसके बाद, फिन-टेक स्टार्टअप्स शामिल हुए और प्रमुख रूप से ई-वैलेट्स, निवेश, बैंकिंग एवं कर रिटर्न समाधानों पर जोर दिया जाने लगा। अब यह स्वास्थ्य सेवा बाजार की दिशा में बढ़ रहा है, जिस दिशा में भारत सरकार द्वारा भी कदम उठाये जा रहे हैं।

प्रैक्टो, मेरा पेशेंट, 1 एमजी, फार्मईज़ी आदि कई एमहैल्थ एप्स सक्रिय रूप से भारत में काम कर रहे हैं। इसमें डॉक्टर-रोगी इंटरैक्शन, ई-फार्मेसी, डाटा मैनेजमेंट इत्यादि शामिल हैं जो एक क्लिक पर स्वास्थ्य सेवाओं की सुविधा प्रदान करते हैं।

हेल्थकेयर सेक्टर में नवीन सेवाओं के बारे में मेरा पेशेंट ऐप्प के संस्थापक, मनीष मेहता ने बताया कि जोमैटो, स्विग्गी, ओला, उबर और इस तरह के अनेक नये-नये खिलाड़ियों ने संबंधित क्षेत्रों में ग्राहकों के व्यवहार में परिवर्तन लाये हैं, ऐसे में अब स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र की बारी है, ताकि नई-नई विपणन रणनीतियां अपनाए और ग्राहकों (मरीजों) के व्यवहार में परिवर्तन लाए।

नारायण सेवा द्वारा 60 दिव्यांगों को सहायक उपकरण

नारायण सेवा संस्थान एवं सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग द्वारा डूंगरपुर के सामान्य चिकित्सालय परिसर में आयोजित शिविर में 60 दिव्यांगों को निशुल्क सहायक उपकरण प्रदान किए गए। अतिरिक्त जिला कलक्टर डूंगरपुर विजय पाठक, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग के निदेशक अशोक शर्मा व परियोजना समन्वयक महावीर इंटरनेशनल के विनोद दोषी ने 16 ट्राई साइकिल, 12 व्हील चेयर, 5 श्रवण यंत्र, 10 जोड़ी बैसाखी, 2 सीपी चेयर व 15 दिव्यांगजन को वॉकिंग स्टीक प्रदान की।

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक डॉ. तुक्तक भानावत द्वारा 352, कृष्णपुरा, सेंटपॉल स्कूल के पास, उदयपुर - 313001 (राज.) से प्रकाशित एवं मुद्रक लोकेश कुमार आचार्य द्वारा मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस 311-ए, चित्रकूट नगर, भुवाणा, उदयपुर (राज.) से मुद्रित। सम्पादक : रंजना भानावत। फोन : 0294-2429291, मोबाइल - 9414165391, Email : shabdranjanudr@gmail.com, drtuktakbhanawat@gmail.com, सर्व विवादों का न्याय क्षेत्र उदयपुर होगा।